 ੧ਓ सतिगुर प्रसादि ॥ 

गुर गिआन अंजन सचु नेत्री पाइआ ॥
अंतरि चानणु अगिआनु अंधेरु गवाइआ ॥

मासिक

गुरमति ज्ञान

आश्विन-कार्तिक, संवत् नानकशाही ५४८
वर्ष १० अंक २ अक्तूबर 2016

संपादक : सतविंदर सिंघ फूलपुर
सहायक संपादक : जगजीत सिंघ
गुरप्रीत सिंघ भोमा

चंदा

सालाना (देश)	१० रुपये
आजीवन (देश)	१०० रुपये
सालाना (विदेश)	२५० रुपये
प्रति कापी	३ रुपये



चंदा भेजने का पता
सचिव, धर्म प्रचार कमेटी
(शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी)
श्री अमृतसर-१४३००६
फोन : 0183-2553956-60
एक्सटेंशन नंबर
वितरण विभाग **303** संपादकीय विभाग **304**
फैक्स : 0183-2553919
e-mail : gyan_gurmat@yahoo.com
website : www.sgpc.net

ISSN 2394-8485

विषय-सूची

गुरबाणी विचार

काहे पूत झगरत हउ संगि बाप ॥
जिन के जणे बडीरे तुम हउ तिन सिउ झगरत पाप ॥१॥ रहाउ ॥
जिसु धन का तुम गरबु करत हउ सो धनु किसहि न आप ॥
खिन महि छोडि जाइ बिखिआ रसु तउ लागै पछुताप ॥१॥
जो तुमरे प्रभ होते सुआमी हरि तिन के जापहु जाप ॥
उपदेसु करत नानक जन तुम कउ जउ सुनहु तउ जाइ संताप ॥२॥ (पन्ना १२००)

चतुर्थ पातशाह श्री गुरु रामदास जी सारग राग में उच्चारण किए गए उपरोक्त शबद में पिता-पुत्र के रिश्ते की बात करते हुए उपदेश कर रहे हैं कि कैसे धन-पदार्थ आदि की खातिर कई बार पुत्र अपने पिता से झगड़ा करना शुरू कर देता है।

गुरु जी का कहना है कि हे पुत्र (जीव)! तुम अपने पिता के साथ दुनियावी धन-पदार्थों की खातिर क्यों झगड़ा करते हो? जिन माता-पिता ने तुम्हें जन्म दिया तथा पालन-पोषण करके बड़ा किया उनके साथ झगड़ा करना पाप है, गलत है। जिस धन का तुम गर्व करते हो, वो धन कभी किसी का नहीं बना; वो धन कभी साथ नहीं जाता। धन आदि का रस, चसका (अंतिम समय आने पर) एक क्षण में ही छूट जाता है और तब उस पुत्र (जीव) को इस धन की खातिर अपने पिता के साथ किए गए झगड़ों आदि के लिए पश्चाताप होता है। जो प्रभु सबका स्वामी है, उसी का नाम-सिमरन करो। वही नाम-सिमरन की कमाई ही (अंतिम समय) साथ जाएगी। अंतिम पंक्ति में गुरु जी का कथन है कि जो उपदेश धन आदि का लोभ त्यागकर नाम-सिमरन में लगने का दिया जा रहा है, यदि उसका पालन किया जाए तो सारे मानसिक दुख-कलेश दूर हो सकते हैं।

उपरोक्त शबद श्री गुरु रामदास जी द्वारा उस समय उच्चारण किया बताया जाता है जब गुरु जी ने पंचम पातशाह के रूप में गुरुआई श्री गुरु अरजन देव जी को देने का एलान किया और तब गुरु जी का बड़ा पुत्र प्रिथीचंद गुरुआई पर अपना हक जताते हुए अपने पिता-गुरु से झगड़ा करने लगा। गुरु जी जानते थे कि प्रिथीचंद में सेवा-भावना कम तथा धन-पदार्थों का लोभ अधिक है। चौथे गुरु जी द्वारा प्रिथीचंद को सम्बोधित यह शबद आज के हर पुत्र के लिए पिता के प्रति सम्मान बनाए रखने के लिए प्रेरणास्रोत है।

दूसरे अर्थों में इस शबद से यह शिक्षा भी मिलती है कि परमात्मा को पिता रूप में स्वीकार कर जीव को उसके अच्छे पुत्र, संतान होने का फर्ज़ निभाना चाहिए तथा किसी भी प्रकार की प्राप्ति हो जाने पर प्रभु-पिता का ही शुक्राना करना चाहिए न कि मन में गर्व पैदा करना चाहिए।





अंध कूप ते काढिअनु . . .

गुरु बंदी छोड़ है। गुरु जीवों को जीवन मुक्त करने वाला है। गुरु का धरती पर आगमन ही जीवों को बंधनों से मुक्त करने के लिए होता है। गुरु को कौन बंदी बना सकता है? गुरु तो लीला बरतता है। गुरु का व्याख्या करने का ढंग विलक्षण है। गुरु का समूचा जीवन ही व्याख्या है। गुरु *"अपना बिगारि बिरांना सांढै"* के अर्थ समझाने के लिए मज़लूमों के लिए हाअ का नारा बनकर बाबर के कैदखाने में कैद हो जाता है। गुरु मानवता को शीतल करने हेतु खुद गर्म तवियों पर बैठ जाता है। गुरु दूसरे के धर्म की रक्षा हेतु चांदनी चौक में जाकर अपना शीश भेंट कर देता है। जिस किले की कैद में कभी कोई ज़िंदा बाहर न आया हो, गुरु उस किले में जीवन की आशा छोड़ चुके कैदियों को जीवन-दान देने के लिए बंदी बनकर किले में कैद हो जाता है। अपनी रिहाई का परवाना सुनकर बंदी छोड़ दाता श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब अपना आदेश सुना देते हैं :

इहु सब छूटैं तब हम जावैं। नाहित इन ढिग सदा रहावैं। *(पंथ प्रकाश)*

बादशाह के कहने पर कि जितने कैदी राजा गुरु जी के चोगे (चोले) की कलियां पकड़कर किले में से बाहर आ सकते हैं उनको रिहा कर दिया जाएगा। गुरु जी ने बावन कलियां वाला चोला पहनकर किले से बाहर आते हैं तथा *"अंध कूप ते काढिअनु लड़ु आप फड़ाए"* वाली बख़्शिश कर साथ ही बावन राजाओं को भी बाहर ले आते हैं। पंथ प्रकाश का कर्त्ता वर्णन करता है :

सभ राजे फड़ बाहर आए। हुते बवंजा मरे जीवाए।

गुरु जी का पल्ला पकड़कर ग्वालियर के किले से रिहा होना बावन राजाओं के लिए सचमुच ही दूसरे जन्म के सामान था। उनको यह जीवन-दान गुरु का पल्ला पकड़ने से ही प्राप्त हुआ था।

गुरु साहिबान ने शबद की टेक के बिना *"बिनु सबदै मुआ है सभु कोइ"* के अनुसार आत्मिक रूप में मृत हो चुकी मानवता को गुरबाणी के लड़ लगाकर आत्मिक जीवन का दान बख़्शिश किया। जीवों के उद्धार हेतु 'नानक निरंकारी जोत' युक्ति बरताने के लिए दस पातशियों में परिवर्तित होती रही। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने अंतिम समय तख़्त, सचखंड श्री हजूर साहिब, नांदेड़ में समस्त मानवता पर बड़ा परोपकार करते हुए *"लड़ पकड़ाइ शबद का रूप"* अनुसार शबद गुरु श्री गुरु ग्रंथ साहिब के लड़ लगा दिया तथा युक्ति बरताने के लिए *"बख़श कीउ खालस को जामा"* गुरु-पंथ को रहनुमाई बख़्शिश की। अब हम *"ग्रंथ पंथ गुर मानीऐ"* के आदेश की पालना करते हुए गुरु-ग्रंथ तथा गुरु-पंथ के लड़ लगकर सांसारिक व मानसिक बंधनों से निज़ात हासिल करनी है। पंथ प्रवानित सिक्ख रहित मर्यादा में स्पष्ट किया गया है कि "एक अकाल पुरख

के बिना किसी देवी, देवते, अवतार, पैगंबर की उपासना नहीं करनी। दसों गुरु साहिबान को तथा उनकी बाणी के बिना किसी और को अपना मुक्ति-दाता नहीं मानना।"

बंदी छोड़ दिवस पर जहां हमने घरों में दीपमाला करके इस परंपरा को निभाना है, वही अपने हृदय रूपी घरों में भी शबद रूपी ज्ञान का दीपक जलाकर अपने जीवन को रौशन करना है :

सतिगुरू सबदि उजारो दीपा ॥
बिनसिउ अंधकार तिह मंदरि रतन कोठड़ी खुल्ही अनूपा ॥ (पन्ना ८२१)

दीवाली की रात जो दीए जलाए जाते हैं, वो सुबह तक बुझ जाते हैं :

दीवाली दी राति दीवे बालीअनि। तारे जाति सनाति अंबरि भालीअनि।
फुलां की बागाति चुणि चुणि चालीअनि। तीरथि जाती जाति नैण निहालीअनि।
हरि चंदउरी झाति वसाइ उचालीअनि। गुरमुखि सुख फल दाति सबदि सम्हालीअनि ॥६॥
(वार १९:६)

किंतु नाम का दीया "डोलै वाउ ना वडा होइ" के अनुसार निरंतर हमारे जीवन को रौशन करने के समर्थ है।

अत: बंदी छोड़ दिवस मनाते हुए यह अरदास करें कि बावन राजाओं की तरह कहीं हमें भी शबद गुरु का पल्ला पकड़ने का ढंग आ जाए तथा हम गुरमति रहनी के धारणी होकर विष्य-विकारों, वहमों-भ्रमों मड़ियों-मसाणों, व्रतों, देह-धारी गुरु डंम आदि अज्ञानी कर्मों के बंधन से मुक्त हो अंधकारमयी जीवन से प्रकाशमयी जीवन के धारणी बनें! 

धंनु धंनु रामदास गुरु जिनि सिरिआ तिनै सवारिआ ॥
पूरी होई करामाति आपि सिरजणहारै धारिआ ॥
सिखी अतै संगती पारब्रहमु करि नमसकारिआ ॥
अटलु अथाहु अतोलु तू तेरा अंतु न पारावारिआ ॥
जिन्ही तूं सेविआ भाउ करि से तुधु पारि उतारिआ ॥
लबु लोभु कामु क्रोधु मोहु मारि कढे तुधु सपरवारिआ ॥
धंनु सु तेरा थानु है सचु तेरा पैसकारिआ ॥
नानकु तू लहणा तूहै गुरु अमरु तू वीचारिआ ॥
गुरु डिठा तां मनु साधारिआ ॥ (पन्ना ९६८)

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में सेवा का संकल्प

*-डॉ. सत्येंद्र पाल सिंघ**

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में धर्म को कर्मकांडों, पाखंडों और चुंच ज्ञान से ऊपर उठकर नूतन दृष्टि से देखा गया और इसे मनुष्य के प्रतिदिन आचार और वृत्ति से जोड़कर सेवा की अभिनव परिभाषा स्थापित की गई जो तत्कालीन सोच के विपरीत इसे निकृष्टता से उच्चता की ओर ले जाने वाली सिद्ध हुई। सदियों से समाज, आदेश देने वाले और आदेश का पालन करने वाले वर्गों में विभाजित था। आदेश का पालन करने वाले हेय दृष्टि से देखे जाते थे और घोर अपेक्षा व प्रताड़ना का शिकार थे। गुरु साहिबान ने इस निकृष्ट मानी जाने वाली सेवा वृत्ति को परमात्मा से मेल का माध्यम बनाकर पावन व सम्मानित स्थान दिया। सेवा जहां भरण-पोषण की विवशता थी अब परम पद प्राप्ति की उपलब्धि बन गई।

सेवक कउ सेवा बनि आई ॥
हुकमु बूझि परम पदु पाई ॥ (पन्ना २९२)

गुरबाणी में मनुष्य की सेवा करने की भावना पैदा होने को उसके कर्मों के एक श्रेष्ठ परिणाम के रूप में देखा गया। सेवा जिसे अब तक पारंपरिक और पैत्रिक समझा जा रहा था, धर्म का अंग बन सुशोभित होने लगी। श्री गुरु अंगद देव जी, श्री गुरु अमरदास जी और श्री गुरु रामदास जी ने सेवा को अपनाकर गुरु-पद पाया और इसकी महिमा को सिद्ध किया। गुरमति की इस सेवा भावना का मूल तत्व था हुक्म को जानना। इसी में सेवा का मार्ग और महत्त्व निहित था। जिसने हुक्म देने वाली सत्ता को पहचान लिया और उसके हुक्म को जान लिया वह सेवा के मार्ग पर चलने योग्य हो गया। इसके बिना किए गए किसी भी कर्म को गुरबाणी में सेवा मानने से इन्कार कर दिया गया।

हुक्म देने में समर्थ एक परमात्मा ही है जिसने इस सृष्टि की रचना की है और सब कुछ जिसके अधीन है। श्री गुरु नानक साहिब ने अपने मिशन का आगाज़ करते समय ही इसे स्पष्ट कर दिया था :

हुकमी होवनि आकार हुकमु न कहिआ जाई ॥
हुकमी होवनि जीअ हुकमि मिलै वडिआई ॥
हुकमी उतमु नीचु हुकमि लिखि दुख सुख पाईअहि ॥
इकना हुकमी बखसीस इकि हुकमी सदा भवाईअहि ॥
हुकमै अंदरि सभु को बाहरि हुकम न कोइ ॥
नानक हुकमै जे बुझै त हउमै कहै न कोइ ॥
(पन्ना १)

गुरु साहिब ने कहा कि अपने आप को मिटाकर ही उस महान परमात्मा के हुक्म को समझा और ग्रहण किया जा सकता है, जिसके हुक्म से ही सारी सृष्टि आकार ले रही है और जिसका हुक्म सब पर चल रहा है। वह अपनी महानता से लोगों का उद्धार कर रहा है और सुख-दुख दे रहा है। किसी की सामर्थ्य ही नहीं है कि वह उसके हुक्म का उल्लंघन कर सके अथवा अपने मन की मर्ज़ी करते हुए जीवन में सुख प्राप्त कर सके। जो विकारों में लिप्त है

**ई-१७१६, राजाजी पुरम, लखनऊ-२२६०१७, फोन: ९४१५९-६०५३३*

और अपने मन की करने का यत्न कर रहा है वह सेवक नहीं हो सकता और सेवा उसकी वृत्ति नहीं हो सकती :

मान अभिमान मंधे सो सेवकु नाही ॥(पन्ना ५१)

इस तरह श्री गुरु ग्रंथ साहिब में जहां परमात्मा को सर्वश्रेष्ठ और एकमात्र स्वामी के रूप में देखा गया वहीं उसे पाने के लिए अभिमान, विकार त्यागकर एक सेवक की तरह व्यवहार करते हुए जीवन कर्म करने की प्रेरणा की गई है। यह कर्म भले ही एक सेवक के रूप में करने की प्रेरणा है किंतु दास रहकर भी मनुष्य को आत्मिक विकास और श्रेष्ठ गुणों की ओर ले जाने वाली है। ऐसे गुण जो बड़ी से बड़ी साधना, तप, ध्यान, योग आदि से भी प्राप्त होने संभव नहीं हो पाते थे वे गुरु साहिबान द्वारा दिखाई गई सेवा की राह से सहज ही धारण किए जाने लगे। परमात्मा से दास की भांति विनती करने से ही असंभव से संभव तक की राह खुल गई :

मिसट बचन बेनती करउ दीन की निआई ॥
तजि अभिमानु सरणी परउ हरि गुण निधि पाई ॥
अवलोकन पुनह पुनह करउ जन का दरसारु ॥
अंम्रित बचन मन महि सिंचउ बंदउ बार बार ॥
(पन्ना १४५)

मनुष्य के अंदर जिस सेवा वृत्ति के विकास की बात श्री गुरु ग्रंथ साहिब में की गई है वह दीनता, प्रार्थना और मधुर वचनों अर्थात् विनम्रता से प्राप्त हो सकती है और इसके लिए परमेश्वर की कृपा चाहिए जो उससे ही मांगनी है। इसके लिए बार-बार प्रभु के दर पर जाकर विनती करनी है, जिससे वह प्रसन्न होकर गुणों की दात देने की दया कर दे और उसका भाव मन में इस तरह दृढ़ हो जाये मन अमृत सदृश्य पावन हो जाये। इससे मन के सारे विकार दूर हो जायेंगे और मन में परमात्मा का भाव स्थिर हो जायेगा। एक प्रभु को अपना स्वामी मानकर उसकी सेवा करना मनुष्य की सबसे भली चाकरी है।

दीबानु हमारो तुही एक ॥
सेवा थारी गुरहि टेक ॥१॥ रहाउ ॥
अनिक जुगति नही पाइआ ॥
गुरि चाकर लै लाइआ ॥१॥
मारे पंच बिखादीआ ॥
गुर किरपा ते दलु साधिआ ॥२॥
बखसीस वजहु मिलि एकु नाम ॥
सूख सहज आनंद बिस्राम ॥३॥
प्रभ के चाकर से भले ॥
नानक तिन मुख ऊजले ॥४॥ (पन्ना २१०)

मनुष्य को जो जीवन लक्ष्य किसी भी प्रयत्न, युक्ति, कर्म से नहीं मिल पाता वह प्रभु का सेवक बनकर हासिल हो जाता है। उसकी सेवा विकारों का नाश करने वाली है। सेवा करते हुए वह अपनी इंद्रियों पर नियंत्रण पा लेने में सफल हो जाता है, जिससे सारे भटकाव मिट जाते हैं और सुख व सहज की प्राप्ति होती है। यह मनुष्य के जीवन की सबसे उज्ज्वल उपलब्धि है।

परमात्मा की सेवा की अनिवार्य शर्त है कि यह मन लगाकर की जाए। सेवा पूर्ण समर्पण के बिना हो तो जीवन का उद्देश्य अप्राप्य रहता है। इसके लिए मन में परमात्मा के प्रति अटूट विश्वास होना चाहिए। जो पूर्ण समर्पण और विश्वास के साथ प्रभु की शरण में जाते हैं, प्रभु स्वयं उनकी सहायता करता है और उनके जीवन को संवारता है।

जिन हरि हिरदै सेविआ तिन हरि आपि मिलाए ॥
गुण की साझि तिन सिउ करी सभि अवगण सबदि जलाए ॥ (पन्ना ३०३)

परमात्मा के प्रति समर्पण ऐसा हो कि वह जीवन का आधार बन जाये और उसके बिना

जीवन की कल्पना ही न की जा सके।

हरि बिनु किउ जीवा मेरी माई ॥
जै जगदीस तेरा जसु जाचउ मै हरि बिनु रहनु न जाई ॥ *(पन्ना १२३२)*

परमात्मा के बिना पल भर भी न रह पाने की विह्वलता उस पूर्ण समर्पण का प्रतीक है जिसे सेवा भाव को दृढ़ करने वाला बताया गया था। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में इसे मछली और पानी, चात्रिक और मेघ, चकोर और चंद्रमा, चकवी और सूरज, पतंगा और दीपक, हिरन और नाद, भंवरा और फूल तथा हाथी और काम के बीच संबंध आदि उदाहरणों से जहां स्पष्ट किया गया वहीं इसमें प्रेम तत्व को समाहित कर जीव और परमात्मा के संबंध को रस पूर्ण बना दिया गया। जैसे बालक दूध और खीर से स्नेह करता है, मनुष्य की दृष्टि में परमात्मा के प्रति वैसी ही ललक हो। इससे सेवा कोई बाध्यता न होकर आनंददायक वृत्ति बन गई। जब ऐसी सेवा-भावना मन में जाग उठे तो मनुष्य को सारी सांसारिक प्राप्तियां फीकी लगने लगती हैं और माया-मोह से मन उचाट जाता है और प्रभु से मिलने की लालसा प्रबल हो उठती है। परमेश्वर जिस हाल में रखे उसे प्रिय लगता है।

जिउ तू राखहि तिउ रहा जो देहि सु खाउ ॥
जिउ तू चलावहि तिउ चला मुखि अंम्रित नाउ ॥
मेरे ठाकुर हथि वडिआईआ मेलहि मनि चाउ ॥
(पन्ना १०१२)

दास का धर्म है कि स्वामी की हर बात उसे प्रिय लगे और उसे वह प्रसन्नता से स्वीकार करने में अपना हित समझे। स्वामी सुख अथवा दुख, हर्ष अथवा शोक जो भी दे रहा है वैसे ही वह ईश्वर की इच्छा मान कर रहे। जो भी पदार्थ परमात्मा ने उसे बख़्शे हैं उनमें वह संतुष्ट रहे। जीवन को वह जिस दिशा में ले जा रहा है उस दिशा में चलता जाये किंतु हर हाल में परमात्मा का सिमरन उसके मन मस्तिष्क में चलता रहे। मन में सदा यह आस बनी रहे कि उसका जीवन परमात्मा की कृपा से गुणों से परिपूर्ण हो जाये जिनके सहारे वह भवजल से पार हो सके। इस तरह सेवा मात्र आज्ञा पालन न रहकर एक ऐसी क्रिया के रूप में सामने आई जो धर्म की सर्वश्रेष्ठ अवस्था, प्रभु के सिमरन में रहते हुए की जाये और जिससे दास के अंदर उत्तम मानवीय गुणों का विकास हो। यह सिमरन दिन-रात चलने वाला सिमरन है जो कभी टूटता नहीं, निरंतर दृढ़ होता जाता है। सदैव परमात्मा दृष्टि और सोच में विद्यमान रहता है। इससे उसका जीवन ढंग ही बदल जाता है। श्री गुरु रामदास जी ने 'गउड़ी की वार' में प्रभु को अपना स्वामी बना लेने वाला गुरसिक्ख भोर में उठकर प्रभु के नाम का सिमरन करता है और दिन चढ़ते ही अपनी दिनचर्या आरंभ कर देता है। वह गुरु के उपदेश सुनता और ध्यान धरता है ताकि सारे विकारों का नाश हो जाये। वह गुरबाणी का गायन करता है और उठते-बैठते ईश्वर का स्मरण करता रहता है। ऐसा गुरसिक्ख जो हर सांस के साथ ईश्वर का नाम जपता रहता है अर्थात् स्वयं को पूर्णत: ईश्वर से जोड़ लेता है, वह सतिगुरु को प्रिय लगता है। यही सेवा का सफल होना है कि सेवक और उसकी सेवा प्रभु को प्रिय लगने लगे। श्री गुरु रामदास जी ने एक अन्य स्थान पर उन गुरसिक्खों को धन्य-धन्य कहा है जो प्रभु की शरण में आये हैं, जो मुख से प्रभु का नाम जप रहे हैं, जिनका मन प्रभु नाम सुनते ही आनंद से भर जाता है और जो सेवा के मार्ग पर चलते हुए प्रभु से नाम का दान पाने में सफल होता है। ऐसा गुरसिक्ख परमात्मा के हुक्म को मानता है इसलिए श्री गुरु

रामदास जी ने उसे *"तिसु गुरसिख कंउ हंउ सदा नमसकारी"* कहते हुए सम्मान दिया। यह सम्मान उसके अडोल और अटूट सेवा भाव के लिए व्यक्त किया गया जो हर हाल में प्रभु को अंग-संग रखता है और उससे कभी बेमुख नहीं होता और सदा उसके प्रति कृतज्ञ रहता है। यह सेवा भावना मान-अपमान से ऊपर उठाकर इस बिंदु पर ला खड़ा करती है कि वह प्रभु का सेवक है और यही उसकी सबसे बड़ी प्राप्ति है।

लाला हाटि विहाझिआ किआ तिसु चतुराई ॥
जे राजि बहाले ता हरि गुलामु घासी कउ हरि नामु कढाई ॥
जनु नानकु हरि का दासु है हरि की वडिआई ॥
(पन्ना १६६)

सेवा करते हुए गुरसिक्ख कभी भी अपनी सांसारिक स्थिति से प्रभावित नहीं होता। वह राजगद्दी पर बैठा हुआ है तब भी स्वयं को प्रभु का गुलाम ही समझकर रहता है। यदि वह घास काटने वाला मज़दूर है तब भी उसके मन में परमात्मा का सिमरन चल रहा होता है। संसार में जन्म लेते ही वह प्रभु की सत्ता और अधीनता में आ गया है। इसमें उसकी कोई बुद्धि या चतुराई काम नहीं आ सकती। वह सदा प्रभु की आज्ञा के अधीन ही रहने वाला है। जब वह इस दासत्व को मन से स्वीकार कर लेता है तो प्रभु उस पर अपना स्नेह व कृपा बरसाने लगता है। बाबा बुड्ढा जी गुरु साहिबान का गुरतागद्दी की सम्पूर्ण रस्में भी करते रहे और वक्त पर गुरु-घर के मवेशियों के लिए घास भी काटी और देखभाल की। वे सिमरन की उसी अवस्था में रहे और आज सिक्ख पंथ के सबसे आदरणीय शख़्शियतों में से हैं। श्री गुरु अमरदास जी गुरुगद्दी पर आसीन होने से पूर्व बासठ साल की आयु होते हुए भी श्री गुरु अंगद देव जी के स्नान के लिए भोर में, गागर में भरकर ब्यास दरिया से पानी लाने से लेकर लंगर और संगत की सेवा करते रहे और नाम भी जपते रहे। उन्होंने सेवा और सिमरन का अदभुत सुमेल स्थापित किया। यह सेवा का ऐसा आदर्श था कि उनके मन की सारी कामनायें और उद्वेग शांत हो गये। नाम का दान मिला तो मन तृप्त हो गया तथा और कुछ भी पाने की इच्छा न रही। इसी संतुष्टि और संतृप्ति ने उनके लिए परम पद के द्वार खोल दिए।

सेवा करत होइ निहकामी ॥
तिस कउ होत परापति सुआमी ॥ (पन्ना २८६)

निष्काम हो जाना सेवा की यात्रा का महत्त्वपूर्ण पड़ाव है, जहां परमात्मा की शरण प्राप्त हो जाती है। यह शरण निरंकार परमात्मा नाम के रूप में बख़्शता है जो सबसे बड़ा धन है और जिसे पाने वाला संसार का सबसे भाग्यशाली व्यक्ति होता है। यह नाम धन गुणों का दाता और अवगुणों का नाश करने वाला है जो गुरसिक्ख को पावन और पवित्र बना देता है। इस धन को पाने की अभिलाषा रखने वाले और उसे पाने पर तृप्त हो जाने वाले जीवन के सबसे बड़े भय काल से भी मुक्त हो जाते हैं।

तुधु सालाहनि तिन धनु पलै नानक का धनु सोई ॥
जे को जीउ कहै ओना कउ जम की तलब न होई ॥ (पन्ना १३२८)

काल से परे परमात्मा है और उसका दास भी जब नाम धन पाकर काल के भय से मुक्त हो जाता है तो दोनों अभेद हो जाते हैं। श्री गुरु अरजन देव जी फरमान करते हैं कि *"हरि का सेवकु सो हरि जेहा ॥"* जैसा हरि (प्रभु) है वैसा ही उसका सेवक भी होता है और इनमें अंतर करना संभव नहीं होता। यह अभेदता वैसी ही है जैसे जल से तरंग उठती है, भिन्न रूप में

दिखती है किंतु पुन: नदी में ही समा जाती है। श्री गुरु तेग बहादर जी ने कहा कि *"हरि जन हरि अंतरु नहीं नानक साची मानु ॥"* इससे बड़ा सेवा का सम्मान और क्या हो सकता है। गुरबाणी में निरंतर इस बात को मुखर किया गया कि सेवक सम्माननीय है और उसके पैरों की धूल भी पावन है।

जो दीसै गुरसिखड़ा तिसु निवि निवि लागउ पाइ जीउ ॥ (पन्ना ७६३)

सेवक की सेवा उसे परमात्मा के दरबार में विशेष स्थान दिलाती है और परमात्मा स्वयं उसकी रक्षा व प्रतिपालना करता है। अपने सेवक के हर कार्य में वह उसकी सहायता को आता है और उसके कार्य सिद्ध करता है। श्री गुरु अरजन देव जी ने कहा कि इसमें वह तनिक भी विलंब नहीं करता *"ततकाल होइ आवै ॥"* वह सेवक को निकट से अपने होने का एहसास करवाता है और उसके विश्वास को दृढ़ करता है। श्री गुरु अरजन देव की शांत चित्त प्रभु-सिमरन में लीन रहे और उसके जान से मारने की नीयत से आ रहा सुलही ख़ान घोड़े सहित ईंट के जलते हुए भट्टे में जा गिरा और भस्म हो गया।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में जहां प्रभु की सेवा की प्रेरणा है जो उसका नाम जप कर, उस पर विश्वास को टिका कर अवगुणों का त्याग करते हुए गुणों को धारण करते हुए प्रभु के अनुकूल जीवन जीना है, वह जिस हाल में रखे उसमें आनंदित रहना है वहीं उनकी सेवा भी करना है जो परमात्मा की राह पर चल रहे हैं। यह सेवा भी फलदायक है।

चारि पदारथ जे को मागै ॥
साध जना की सेवा लागै ॥ (पन्ना २६६)

गुरु-काल में सारे गुरु साहिबान ने अपने अपने समय पर आई हुई संगत का पूरा ध्यान रखा ताकि उन्हें कोई असुविधा न हो। संगत की सेवा के छोटे-छोटे कार्य गुरु-घर के प्रमुख सिक्ख भी बड़ी विनम्रता और सेवा भाव से करते थे। यह प्रभु के नाम की महिमा है कि मन में उन सब के लिए प्रीति जग जाती है जो प्रभु के मार्ग पर चल रहे हैं।

हरि हरि नामु जपहु मन मेरे मुखि गुरमुखि प्रीति लगाती ॥ (पन्ना ८८)

जिस परमात्मा की सेवा का चाव उसके मन में पैदा होता है वह परमात्मा जब उसे नाम जपते-जपते चेतना जाग्रत होने से घट-घट में दिखने लगता है तो लोगों के प्रति भी उसका आचरण बदल जाता है और वह उनमें भी ईश्वर का रूप देखते हुए वैसा ही प्रेम और सेवा का संबंध बना लेता है, जैसे उसने परमात्मा से बनाया हुआ है। वास्तव में परमात्मा और गुरसिक्ख के संबंध का आधार सच है। गुरबाणी में इसका विस्तार से उल्लेख करते हुए कहा गया कि परमेश्वर ने जितने भी महाद्वीप, ब्रह्मांड, सूर्य मंडल रचे सब में सच का तत्व है। उसके सारे कार्यों और विचारों में सच का वास है। वह सदा से ही सच्चे हुक्म दे रहा है और सच का पालन पोषण कर रहा है। वह सारी शक्तियों का मालिक है और केवल उसकी कीर्ति ही सच्ची है। वह सच्चा स्वामी है। जिन्होंने उस सच्चे स्वामी की शरण लेकर उसे मन में बसा लिया है वे भी परमात्मा की ही तरह सच की मूर्ति हो जाते हैं *"नानक सचु धिआइनि सचु"* यह सच गुरसिक्ख के आचरण को सभी के प्रति वैसा ही उज्ज्वल व गुणी बना देता है जैसा परमात्मा की महानता में प्रकट होता है। परमात्मा की महानता उसके नाम में ही है जो अटल और अडोल रहकर सच्चा न्याय करने वाला है, सभी के मन की समझने वाला है और

(शेष पृष्ठ १६ पर)

श्री गुरु ग्रंथ साहिब की बाणी में गुरमुख और मनमुख की परिभाषा

*-डॉ. कृष्णलाल बिश्नोई**

सिक्ख मत में ये दो शब्द-- गुरमुख और मनमुख विशिष्ट अर्थ के द्योतक हैं। गुरबाणी संसार के लोगों को दो वर्गों में विभाजित करके देखती है। पहला वर्ग हैं गुरमुख-जनों का, जो गुरु को सम्मुख रखकर अर्थात् अपने गुरु द्वारा बताए अनुसार जीवन बिताते हैं। दूसरा वर्ग मनमुख-जनों का, जो अपने मन के पीछे लगकर जीवन-बसर करते हैं। हम संसार के अंदर दो प्रकार के इंसान हैं। एक वे जो अच्छे कर्म करते हैं तथा जिनके मन में दया, धर्म, शील, संतोष है; जो किसी का दिल नहीं दुखाते और अपनी हक-हलाल की कमाई खाते हैं; जो ईश्वर की शरण में रहते हैं; भजन-बंदगी करते हैं। इन्हें गुरमुख, महापुरुष, दया पुरुष आदि कहते हैं, दूसरे वे लोग हैं जो आते मन की मर्ज़ी को सर्वेपुरि रखते तथा मन के पीछे लगकर बिना अच्छे-बुरे काम की पहचान किए कर्म करते हैं। चोरी-यारी, झूठ-फरेब तथा गरीबों एवं कमज़ोरों पर अत्याचार करते हैं; जो मादक पदार्थों का सेवन करते हैं। ऐसे लोग आसुरी प्रवृत्ति के होते हैं। इन्हें मनमुख कहते हैं।

गुरमुख ऐसे इंसान होते हैं जो किसी संत सतिगुरु की शरण में आकर उनकी शिक्षा पर पूरा-पूरा अमल करते हैं। ये बुरे कर्मों से डरते हैं, हमेशा शुभ कर्म करते हैं और मालिक की भक्ति में लीन रहते हैं।

मनमुख लोग अपने मन की रुचियों के अनुसार चलते हैं तथा हमेशा विषय वासनाओं में फंसे रहते हैं। ये लोग हमेशा सच्चे मार्ग से दूर होकर धर्म मर्यादाओं के विपरीत बुरा आचरण करते हैं। ये लोग हर दम अपने मतानुसार ही कार्य-व्यवहार करते हैं।

ईसाई धर्म में ऐसे लोगों को 'गुड' और 'ईवल' अर्थात् 'नेक' व 'बद' कहते हैं।

इस्लाम धर्म में अच्छे लोगों को मोमिन अर्थात् मोम के सामान दिल रखने वाला, खुदा से डरने वाला किसी के दिल को न दुखाने वाला कहा गया है। घटिया किस्म के लोगों को बुरे कर्म करने वाला काफिर कहा गया है। इस आलेख में भी हमारा उद्देश्य श्री गुरु ग्रंथ साहिब की बाणी के आधार पर गुरमुख एवं मनमुख का व्यवहारिक अर्थ बताने का है। श्री गुरु नानक देव जी का पावन फरमान है :

निकटि वसै देखै सभु सोई ॥
गुरमुखि विरला बूझै कोई ॥ *(पन्ना ८३१)*

अर्थात् वह मालिक हर घट में अंग-संग रहता है। वो सबके पास है। वो सभी को देख रहा है। कोई विरला जन ही, जो कि गुरमुख हो, इस बात को समझता है।

गुर बिनु मोख मुकति किउ पाईऐ ॥
बिनु गुर राम नामु किउ धिआईऐ ॥
गुरमति लेहु तरहु भव दुतरु मुकति भए सुखु पाइआ ॥ *(पन्ना १०४१)*

अर्थात् गुरु के बिना न तो मुक्ति प्राप्त होती है और न ही प्रभु-नाम का सिमरन किया जा सकता है। गुरमति धारण करने पर ही जीव भवसागर से पार हो सकता है।

गुरमुख प्रभु-न्याय में आखंड आस्था रखते हुए, साधु-संग के प्रति उत्सुक बना

**बी-१११, समता नगर, कृषि उपज मंडी के सामने, बीकानेर (राजस्थान)- ३३४००४, फोन : ९४६०००२३०९*

रहता है और अपनी विवेक दृष्टि से देखता हुआ प्रभु-हजूरी का अनुभव करता है। गुरमुख इंद्रिय भोगों में अरुचि रखता हुआ भौतिक पदार्थों में अपरिग्रहपूर्वक वैराग्य भावना बनाए रखता है। उसकी मन-बाणी और कर्म से सत्याचर्णान्मुख वृत्ति ही उसे प्रभु-शरण की ओर प्रेरित करती रहती है। ऐसा मनुष्य अपने मन को नियंत्रण में रखते हुए सतसंग-मार्ग का पथिक बना रहता है :

मनु चलै न जाई ठाकि राखु ॥
बिनु हरि रस राते पति न साखु ॥
तू आपे सुरता आपि राखु ॥
धरि धरण देखै जाणै आपि ॥
आपि भुलाए किसु कहउ जाइ ॥
गुरु मेले बिरथा कहउ माइ ॥
अवगण छोडउ गुण कमाइ ॥
गुर सबदी राता सचि समाइ ॥ (पन्ना ११८८)

श्री गुरु नानक देव जी 'सिध गोसटि' बाणी में स्पष्ट करते हैं कि गुरमुख ही सत्य या शबद पर विचार-चिंतन करने में समर्थ हो पाता है। ऐसे साधक के मुख से ही सत्य-बाणी अभिव्यक्त होती है। वह वास्तविक योग-साधना को पहचान कर निज घर (प्रभु-दर) में स्थायी निवास का अधिकारी बनता है और सदा ईश्वर की आराधना करता है :

गुरमुखि साचु सबदु बीचारै कोइ ॥
गुरमुखि सचु बाणी परगटु होइ ॥
गुरमुखि मनु भीजै विरला बूझै कोइ ॥
गुरमुखि निज घरि वासा होइ ॥
गुरमुखि जोगी जुगति पछाणै ॥
गुरमुखि नानक एको जाणै ॥ (पन्ना ९४६)

श्री गुरु अमरदास जी का फरमान है कि गुरमुख मनुष्य ही प्रभु-भक्ति में संलिप्त रहता है। गुरमुख की अवस्था मनुष्य को मन से अहं भाव समाप्त करके प्राप्त होती है। साधु-जनों की चरण-शरण की आशा उसके मन में बनी रहती है। वह जीवन व्यवहार में अनासक्त भाव से रहता हुआ जीवन-मुक्त की पदवी को प्राप्त होता है :

जीवत मुकत गुरमती लागे ॥
हरि की भगति अनदिनु सद जागे ॥
सतिगुरु सेवहि आपु गवाइ ॥
हउ तिन जन के सद लागउ पाइ ॥
(पन्ना १२६२)

श्री गुरु अमरदास जी पावन फरमान करते हैं।

--गुरमुखि विचहु आपु गवाइ ॥
हरि रंगि राते मोहु चुकाइ ॥
अति निरमलु गुर सबद वीचार ॥
नानक नामि सवारणहार ॥ . .
गुर की सेवा सदा सुखु पाए ॥
संतसंगति मिलि हरि गुण गाए ॥
नामे नामि करे वीचारु ॥
आपि तरै कुल उधरणहारु ॥ . .
अपुने सतिगुर कउ सदा बलि जाई ॥
गुरमुखि जोती जोति मिलाई ॥ (पन्ना ३६२)
--जिनी गुरमुखि हरि नाम धनु न खटिओ से देवालीए जुग माहि ॥
ओइ मंगदे फिरहि सभ जगत महि कोई मुहि थुक न तिन कउ पाहि ॥
पराई बखीली करहि आपणी परतीति खोवनि सगवा भी आपु लखाहि ॥
जिसु धन कारणि चुगली करहि सो धनु चुगली हथि न आवै ओइ भावै तिथै जाहि ॥
(पन्ना ८५२)

गुरमुख-जन संशय में नहीं रहते। वे हमेशा सहजावस्था में रहते हैं :

गुरमुखि संसा मूलि न होवई चिंता विचहु जाइ ॥
जो किछु होइ सु सहजे होइ कहणा किछू न जाइ ॥

नानक तिन का आखिआ आपि सुणे जि लइअनु पंनै पाइ ॥ *(पन्ना ८५३)*

श्री गुरु अमरदास जी फरमान करते हैं कि गुरमुख (मानसिक रूप से) कभी बूढ़े नहीं होते उनके हृदय में ज्ञान होता है। उनकी सुरति प्रभु में जुड़ी रहती है और वे सदा चढ़दी कला में रहते हैं :

गुरमुखि बुढे कदे नाही जिन्हा अंतरि सुरति गिआनु ॥
सदा सदा हरि गुण रवहि अंतरि सहज धिआनु ॥
ओइ सदा अनंदि बिबेक रहहि दुखि सुखि एक समानि ॥
तिना नदरी इको आइआ सभु आतम रामु पछानु ॥
मनमुखु बालकु बिरधि समानि है जिन्हा अंतरि हरि सुरति नाही ॥
विचि हउमै करम कमावदे सभ धरम राइ कै जांही ॥
गुरमुखि हछे निरमले गुर कै सबदि सुभाइ ॥
ओना मैलु पतंगु न लगई जि चलनि सतिगुर भाइ ॥
मनमुख जूठि न उतरै जे सउ धोवण पाइ ॥
नानक गुरमुखि मेलिअनु गुर कै अंकि समाइ ॥
(पन्ना १४१८)

मनमुख शब्द गुरमुख वृत्ति के विपरीत संसारोन्मुख आसक्ति मूलक अहंकारी प्रवृत्ति में संलिप्त मनुष्य के लिए प्रयुक्त हुआ है। ऐसा व्यक्ति आसक्ति-भावना अथवा फल कामना से प्रेरित होकर 'कर्म' में प्रवृत्त होता है। ऐसे मनुष्यों का मन ज्ञान-प्रकाश से ज्योतित नहीं हो पाता। मनमुखी इंद्रियारामी होकर भौतिक सुखों को ही सर्वस्व समझता हुआ व्यर्थ कर्मों में लगा रहता है और जीवन का वास्तविक लक्ष्य भूल जाता है; जिस कारण घोर अभाव दुखों में जलता रहता है। श्री गुरु नानक देव जी पावन फरमान करते हैं :

छादनु भोजनु मागतु भागै ॥
खुधिआ दुसट जलै दुखु आगै ॥
गुरमति नही लीनी दुरमति पति खोई ॥
गुरमति भगति पावै जनु कोई ॥ (पन्ना ८७९)

मनमुख 'मरण-मुक्ति' पर अपना अंध वस्तु-बुद्धि होने के कारण परमात्मा के रंग में नहीं रंग पाता। यह दुरमति बुद्धि वाला होने के कारण गुरमति मार्ग पर चलने वालों के साथ विवाद-विरोध करने लगता है :

जग सिउ झूठ प्रीति मनु बेधिआ जन सिउ वादु रचाई ॥ . . .
जम दरि बाधा ठउर न पावै अपुना कीआ कमाई ॥ *(पन्ना ५९६)*

मनमुख की मानसिकता मोह से व्याप्त बनी रहती है। श्री गुरु अमरदास जी पावन फरमान करते हैं :

मनमुखु मोहि विआपिआ बैरागु उदासी न होइ ॥
सबदु न चीनै सदा दुखु हरि दरगहि पति खोइ ॥
(पन्ना २९)

मनमुख आंतरिक प्रकाश को ओझल बनाए रखकर हउमै (अहंकार) के प्रभाव से कर्म-चक्र में फंसे रहते हैं :

काइआ अंदरि पापु पुंनु दुइ भाई ॥
दुही मिलि कै स्रिसटि उपाई ॥ . .
घर ही माहि दूजै भाइ अनेरा ॥
चानणु होवै छोडै हउमै मेरा ॥ (पन्ना १२६)

मनमुख के बारे में श्री गुरु अमरदास जी का पावन फरमान है :

मनमुखु अंधा ठउर न पाइ ॥
बिसटा का कीड़ा बिसटा माहि पचाइ ॥ . .
मनमुख मरहि मरि मरणु विगाड़हि ॥
दूजै भाइ आतम संघारहि ॥
मेरा मेरा करि करि विगूता ॥
आतमु न चीन्है भरमै विचि सूता ॥ . .

मनु चंचलु बहु चोटा खाइ ॥
एथहु छुड़किआ ठउर न पाइ ॥
गरभ जोनि विसटा का वासु ॥
तितु घरि मनमुखु करे निवासु ॥ (पन्ना ३६२)

श्री गुरु अमरदास जी फरमान करते हैं कि मनमुख के मन के अंदर सदा दुख व्याप्त रहता है जबकि गुरमुख का मन सदा प्रभु-भक्ति में लीन रहता है :

अंदरि कपटु सदा दुखु है मनमुख धिआनु न लागै ॥
दुख विचि कार कमावणी दुखु वरतै दुखु आगै ॥ . .
गुरमुखि सदा हरि रंगु है हरि का नाउ मनि भाइआ ॥
गुरमुखि वेखणु बोलणा नामु जपत सुखु पाइआ ॥
नानक गुरमुखि गिआनु प्रगासिआ तिमर अगिआनु अंधेरु चुकाइआ ॥
मनमुख मैले मरहि गवार ॥
गुरमुखि निरमल हरि राखिआ उर धारि ॥
(पन्ना ८५१)

मनमुख की बुद्धि बहुत चंचल होती है। वह बहुत चतुर होता है। गुरबाणी में मनमुख की वृत्ति की स्पष्ट उदाहरण पेश की गई है :

मनमुख चंचल मति है अंतरि बहुतु चतुराई ॥
कीता करतिआ बिरथा गइआ इकु तिलु थाइ न पाई ॥
पुंन दानु जो बीजदे सभ धरम राइ कै जाई ॥
बिनु सतिगुरू जमकालु न छोडई दूजै भाइ खुआई ॥
जोबनु जांदा नदरि न आवई जरु पहुचै मरि जाई ॥
पुतु कलतु मोहु हेतु है अंति बेली को न सखाई ॥ . .
मनमुख नामु न चेतनी बिनु नावै दुख रोइ ॥
आतमा रामु न पूजनी दूजै किउ सुखु होइ ॥
हउमै अंतरि मैलु है सबदि न काढहि धोइ ॥
नानक बिनु नावै मैलिआ मुए जनमु पदारथु खोइ ॥ (पन्ना १४१४)

श्री गुरु अमरदास जी मनमुखी व्यक्ति को संदेश देते हैं :

मनमुख नामु न चेतिओ धिगु जीवणु धिगु वासु ॥
जिस दा दिता खाणा पैनणा सो मनि न वसिओ गुणतासु ॥
इहु मनु सबदि न भेदिओ किउ होवै घर वासु ॥
मनमुखीआ दोहागणी आवण जाणि मुईआसु ॥
(पन्ना १४१६)

श्री गुरु रामदास जी फरमान करते हैं कि मनमुख लोग माया-मोह में फंसे रहते हैं। उन्हें नाम-सिमरन अच्छा नहीं लगता :

मनमुखि माइआ मोहु है नामि न लगै पिआरु ॥
कूड़ु कमावै कूड़ु संघरै कूड़ि करै आहारु ॥
बिखु माइआ धनु संचि मरहि अंति होइ सभु छारु ॥
करम धरम सुचि संजमु करहि अंतरि लोभु विकार ॥
नानक मनमुखि जि कमावै सु थाइ न पवै दरगह होइ खुआरु ॥ (पन्ना १४२३)

श्री गुरु अरजन देव जी फरमान करते हैं कि मनमुख लोग शक्ति (शारीरिक बल) के उपासक होते हैं और ऐसे लोग अपने अहं में ही जीवन नष्ट कर देते हैं :

हउ हउ करत बिहानीआ साकत मुगध अजान ॥
ड़ड़कि मुए जिउ त्रिखावंत नानक किरति कमान ॥ (पन्ना २६०)

श्री गुरु अरजन देव जी के अनुसार मनमुख एवं गुरमुख का हाल देखें :

मनमुखि आवै मनमुखि जावै ॥
मनमुखि फिरि फिरि चोटा खावै ॥
जितने नरक से मनमुखि भोगै गुरमुखि लेपु न मासा हे ॥ (पन्ना १०७३)

श्री गुरु रामदास जी गुरमति और गुरमुख व मनमुख के विषय में फरमान करते हैं :

हीरा रतन जवेहर माणक बहु सागर भरपूरु कीआ ॥
जिसु वड भागु होवै वड मसतकि तिनि गुरमति कढि कढि लीआ ॥२॥
रतनु जवेहरु लालु हरि नामा गुरि काढि तली दिखलाइआ ॥
भागहीण मनमुखि नही लीआ त्रिण ओलै लाखु छपाइआ ॥३॥
मसतकि भागु होवै धुरि लिखिआ ता सतगुरु सेवा लाए ॥
नानक रतन जवेहर पावै धनु धनु गुरमति हरि पाए ॥४॥ *(पन्ना ८८०)*

अर्थात् इस शरीर रूपी समुद्र में हीरे, रत्न, लाल, जवाहर, माणक, मोती आदि कितने ही बहुमूल्य पदार्थों के खज़ाने हैं। भाग्यशील जीव ही गुरु की मति धारण करके इन्हें अपने अंदर से प्राप्त कर लेता है। सबसे अधिक मूल्यवान पदार्थ या रत्न या जवाहर केवल प्रभु का नाम ही है। मनमुख तथा मंदभागी जीव उस अनमोल रत्न को प्राप्त नहीं कर सकते। तिनके की ओट में (प्रभु-नाम का) खज़ाना है। जो जीव अच्छा भाग्य लिखवाकर आता है केवल वही सतिगुरु की सेवा में लगा रहता है। वही जीव प्रभु-नाम रूपी रत्न-जवाहर प्राप्त करता है। 

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में सेवा का संकल्प

(पृष्ठ ११ का शेष)

बिन मांगे ही देने वाला दाता है। उसके दरबार में सच का ही मोल है। सच्चे परमात्मा का सिमरन करते हुए सच को धारण करना ही सबसे बड़ी सेवा और कमाई है। सच का आचरण में प्रकट होना ही सेवा की कमाई है।

ओन्ही मंदै पैरु न रखिओ करि सुक्रितु धरमु कमाइआ ॥ *(पन्ना ४६७)*

सच और गुणों को धारण करना ज्ञान की बड़ी-बड़ी पोथियों और ग्रंथों को रटते रहने से अलग है। मनुष्य जीवन भर धर्म ग्रंथों में डूबा रहे और चाहें जितना भी ज्ञान एकत्र करता जाये सब व्यर्थ है। परमात्मा का नाम-सिमरन ही एक राह है। सच को तभी धारण किया जा सकता है जब मन सच्चा हो और विकारों, भ्रम, माया-मोह से रहित हो जाये और इस मार्ग पर चलने का ढंग आ जाये। वह बुरे कर्म नहीं करता क्योंकि वह जानता है कि अपने भले-बुरे कर्मों का फल भुगतना पड़ता है।

जितु कीता पाईऐ आपणा सा घाल बुरी किउ घालीऐ ॥ *(पन्ना ४७४)*

गुरसिक्ख की सेवा की सफलता विकारों से मुक्त हो जाने और सच को धारण कर लेने में है। यह सच उसको सभी के प्रति सुहृद, मधुर, उदार और सहायक बना देता है। वह जीवन भर सच की ही कमाई करता है *"गुरमुखि सचो सचु कमावै ॥"* सच को धारण करना और अपने आचरण में प्रकट करना ही गुरसिक्ख की सेवा है। परमात्मा के लिए मन में भाव हो और उसकी बनाई सृष्टि के जीवों के प्रति कठोरता, द्वेष, वैर हो ऐसा नहीं हो सकता, यह *"सचु कमावै"* का लक्षण नहीं है। 

श्री गुरु रामदास जी की बाणी में आदर्श सेवक का स्वरूप

-डॉ. शमशेर सिंघ

सिक्ख धर्म में आदर्श सिक्ख का मनोर्थ निष्काम सेवक बनना है। ऐसा सेवक बनना ही उसके जीवन का उद्देश्य है। गुरमति-महल के भीतर सेवा व सिमरन दो बड़े स्तंभ हैं। इन दोनों मूल सिद्धांतों के बिना गुरमति की व्याख्या अधूरी है। सिक्खी के इतिहास में सेवक का एक खास स्थान वर्णन किया गया है। गुरमति में सेवक को ऊंची पदवी प्राप्त है। गुरु साहिबान ने सिक्खी मिशन को आगे बढ़ाने के लिए जब अपने उत्तराधिकारियों का चुनाव किया तो उस वक्त भी सेवक सिक्ख की निष्काम सेवा को ही मुख्य रखा। सेवक का यह इम्तिहान सबसे बड़ा इम्तिहान होता था।

श्री गुरु नानक देव जी से श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के समय तक मानवीय शख़्सियत की बहुपक्षीय निर्माण तथा नयी सृजना एक परिवर्तन था। मनुष्य को आपे (स्वयं) की सोझी करवाना तथा असली मानवीय जीवन जीने का मार्ग दर्शाना एक प्रयत्न था। सेवक की शख़्सियत को हर पक्ष से पूर्णता देना गुरु साहिबान के मिशन का उद्देश्य था। मानवीय शख़्सियत के नव-निर्माण के सिद्धांत को गुरु साहिबान ने सिर्फ बयान ही नहीं किया बल्कि जीया भी, जो हमारे लिए एक आदर्शक मिसाल है, प्रकाश-स्तंभ है। इतिहास गवाह है कि गुरु सहिबान ने पहले सेवक के रूप में सेवा की।

श्री गुरु रामदास जी की पावन बाणी में एक आदर्शक सेवक की शख़्सियत की झलक पड़ती है। गुरु जी ने सेवक के समानार्थक शब्दों का प्रयोग भी किया है, जैसे :

१. लाले गोले : जन नानक गुर के लाले गोले लगि संगति करूआ मीठा ॥ *(पन्ना १७१)*

२. गोली : अपुने हरि प्रभ की हउ गोली ॥ *(पन्ना १६८)*

३. जन : जन की पैज सवारे ॥ (पन्ना ९८२)

ऐसे ही शब्द गुलाम, दास तथा चेरी का प्रयोग भी मिलता है। कहीं-कहीं शब्द वेगारि तथा वेगारीआ का ज़िक्र किया मिलता है। ये सारे शब्द नम्रता के सूचक हैं। नम्र-भाव में रहकर सेवा हो सकती है। ऐसा सेवक परम मुक्ति को प्राप्त होता है।

सेवक के लिए सबसे पहले ज़रूरी है कि पूरी आस्था तथा श्रद्धा से सेवा करने हेतु आपा-सर्मपण करने की भावना मन में हो। सेवक अपना तन, मन तथा धन सब गुरु को सौंपकर सेवा करे। इस तरह पूर्ण रूप में स्व-अर्पण करने से ही सेवक की सेवा रास आ सकती है। गुरु के हुक्म में चलने से ही हउमै का अभाव होता है। कामना रहित सेवा ही उसके आदर्श की पूर्ति में सहायक हो सकती है। सेवक ऐसा करने पर कुछ देता नहीं, कोई एहसास नहीं करता, मात्र प्रभु द्वारा दी हुई अमानत ही वापिस करता है। भक्त कबीर जी ने इस सिद्धांत को स्पष्ट कथन किया है :

कबीर मेरा मुझ महि किछु नही जो किछु है सो तेरा ॥
तेरा तुझ कउ सउपते किआ लागै मेरा ॥
(पन्ना १३७५)

श्रद्धा व आस्था से सेवा करने पर ही प्रभु अपने सेवकों को प्यार करता है, नाम का आश्रय देता है तथा अंग-संग सहायक होकर

डोलने से बचाता है। निष्कामी सेवक को सब जगह प्रभु ज्योति के रूप में नज़र आता है। श्री गुरु रामदास जी पावन फरमान करते हैं :

प्रभ के सेवक बहुतु अति नीके मनि सरधा करि हरि धारे ॥
मेरे प्रभि सरधा भगति मनि भावै जन की पैज सवारे ॥१॥
हरि हरि सेवकु सेवा लागै सभु देखै ब्रहम पसारे ॥
एकु पुरखु इकु नदरी आवै सभ एका नदरि निहारे ॥ (पन्ना ९८२)

सेवक को अपने दयाल एवं मेहरबान प्रभु पर, गुरु पर पूर्ण भरोसा होना चाहिए कि वो अपने सेवकों पर सदा मेहर करता आया है और करता रहेगा। हर युग में जो वाहिगुरु को वरोसाए हुए भक्त थे, प्रभु ने उन पर मेहर की, पैज रखी। हर कार्य-किरत में प्रभु सेवक के अंग-संग रहा। दुष्टों का नाश किया। अहंकारियों व निंदकों की ओर से किनारा कर रखा तथा अपने भक्तों को सम्मान व प्रतिष्ठता की बख़्शिश की।

श्री गुरु रामदास जी 'मारू राग' में इस ख़्याल को बड़े स्पष्ट तथा प्रभावशाली रूप में वर्णन करते हैं :

जन कउ आपि अनुग्रहु कीआ हरि अंगीकारु करे ॥
सेवक पैज रखे मेरा गोविंदु सरणि परे उधरे ॥
जन नानक हरि किरपा धारी उर धरिओ नामु हरे ॥ (पन्न ९९५)

सेवक की गुरु पर श्रद्धा तथा अटूट विश्वास ही उसको संसार समुद्र से पार उतारने में सहायक होता है। प्रभु, गुरु तथा गुरु की बाणी में एकसुरता है। गुरु, प्रभु द्वारा भेजा गया प्रतिनिध होता है। सेवक तथा गुरु का रिश्ता एक रहस्यमयी रिश्ता है जिसको बयान नहीं किया जा सकता, सिर्फ अनुभव ही किया जा सकता है। यह दुनियावी रिश्ता नहीं है। गुरु के बोल प्रभु-पैगाम हैं, इलाही हैं; दिल, दिमाग तथा आत्मा तीनों को अपील करने वाले हैं। गुरु की बाणी परमार्थ का रास्ता है, सेवक के लिए कल्याणकारी है, हलत-पलत के लिए सहायक है। आत्मिक जीवन देने वाला प्रभु का नाम है जो सेवक इसको हृदय में संभालकर रखता है, गुरु अवश्य उसको संसार सागर से पार कर देते हैं। श्री गुरु रामदास जी ने इस सम्बंध में निम्नलिखित शबद कितनी श्रद्धा व विश्वास से उच्चारण किए हैं :

बाणी गुरू गुरू है बाणी विचि बाणी अंम्रितु सारे ॥
गुरु बाणी कहै सेवकु जनु मानै परतखि गुरू निसतारे ॥ (पन्ना ९८२)

श्री गुरु रामदास पातशाह ने आदर्श सेवक की हैसियत में दृढ़ कराया है कि सेवक की सेवा वही सफल है जो गुरमुख बनकर की जाती है। गुरमुख से सेवा का भाव निष्काम सेवा है। सेवा कोई बंधन नहीं, ठोसी हुई मज़बूरी अधीन कार्य नहीं, बल्कि कामना रहित, सहर्ष अपनाया हुआ परोपकारी कार्य है। सेवा वही सफल है जिस पर गुरु का मन संतुष्ट होता है। ऐसी सेवा पाप नाशक है तथा प्रभु एवं जीव के बीच पड़ी दूरी को दूर कर सकती है। ऐसी सेवा मंजूर होती है, ऐसे सेवक का आना ही संसार में सफल है अर्थात् उसका जीवन सफल है। मनमुख होकर सेवा नहीं हो सकती। निष्काम सेवा से ही सेवक की तृष्णा, भूख मिट सकती है। दुनियावी स्वादों की ओर मन नहीं भटकता, सिर्फ प्रभु-सेवा का चाव ही मानसिक तृप्ति प्रदान करता है तथा आत्मिक स्तर पर सिमरन का चाव पैदा होता है। गुरु जी ने इस विश्वास को निम्नलिखित अनुसार अंकित किया है :

ऐसा हरि सेवीऐ नित धिआईऐ ॥

जो खिन महि किलविख सभि करे बिनासा ॥
जे हरि तिआगि अवर की आस कीजै ता हरि निहफल सभ घाल गवासा ॥
मेरे मन हरि सेविहु सुखदाता सुआमी जिसु सेविऐ सब भुख लहासा ॥
मेरे मन हरि ऊपरि कीजै भरवासा ॥
जह जाईऐ तह नालि मेरा सुआमी हरि अपनी पैज रखै जन दासा ॥ (पन्ना ८६०)

मनोवैज्ञानिक पक्ष से सेवक के मन में सेवा की अमिट छाप छोड़ने के लिए गुरु जी ने अलग-अलग शब्दों द्वारा इसको प्रभावशाली बनाने की भरपूर व्याख्या की है। सच्चा सेवक अपना तन, मन तथा धन सब गुरु के समक्ष अर्पण कर देता है। सेवक जब एक ऐसी भावनात्मक अवस्था पर पहुंच जाता है तो अपने प्राण तक भी गुरु के प्रति सेवा हेतु कुर्बान करने के लिए तैयार हो जाता है। कितना आनंद है इस स्व त्यागने में जहां जाकर मैं-मेरी की भावना ख़त्म हो जाती है, सिर्फ 'तू ही तू' रह जाता है। यह सिद्धांत श्री गुरु ग्रंथ साहिब के योगदानियों की एक मौलिक देन है।

गुरु पातशाह फरमान करते हैं कि हे प्रभु! मेरे प्राण भी तेरे बस में हैं। मेरी ज़िंद तथा मेरा शरीर भी सब तेरे दिए हुए हैं। सारा संसार प्रभु के बस में है। ऐसे सेवक को यह ज्ञान है कि यह शरीर की कर्म-इंद्रियां, ज्ञान-इंद्रियां सब प्रभु की देन हैं तथा इनका योग्य प्रयोग ही जीवन-उद्देश्य की पूर्ति की ओर अगर्सर होता है। यदि इनका गलत प्रयोग करते हैं तो जीव का आना निष्फल है और आखिर में पल्ले पछतावा ही रह जाता है :

हमरे प्रान वसगति प्रभ तुमरै मेरा जीउ पिंडु सभ तेरी ॥ . . .
जगंनाथ जगदीसुर करते सभ वसगति है हरि केरी ॥ (पन्ना १७०)

गुरु साहिबान ने भारतीय परंपरागत अपनाई गई सेवक की परिभाषा को बदलकर एक नयी दिशा, आदर्शक रूप तथा आध्यात्मिक प्रवृत्ति प्रदान की। गुरु का सेवक न तो तनख्वाहदार नौकर ही है तथा न ही पदार्थक लालच को मुख्य रखकर सेवा करता है। गुरु जी ने शब्दावली चाहे परंपरागत गुलाम, गोला, लाला-गोला, चाकर, चेरी, दास, जन आदि प्रयोग की है परंतु यहां इन शब्दों का भाव नम्रता का सूचक ही है। दुनियावी दृष्टिकोण से नीचा समझा जाने वाला कार्य, सेवक नम्रता व श्रद्धा से करने में सम्मान समझता है। ऐसी सेवा का मूल्य गुरमति के दृष्टिकोण से लोक-परलोक दोनों में पड़ता है। इसका फल सेवक तक ही सीमत नहीं रहता बल्कि अन्य तक भी लाभान्वित साबित होता है। श्री गुरु रामदास जी कहते हैं कि जो सेवक मेरे प्रभु का संदेश देता है मैं उससे अपना तन, मन बेचने के लिए तैयार हूं :

जो हरि प्रभ का मै देइ सुनेहा तिसु मनु तनु अपणा देवा ॥ . . .
नित नित सेव करी हरि जन की जो हरि हरि कथा सुणाए ॥ (पन्ना ५६१)

गुरमति में सेवक की सेवा द्वारा प्रभु से दूरी समाप्त हो जाती है। सेवा द्वारा की गई प्रभु से समीपता की अवस्था ने धार्मिक इतिहास को एक नया मोड़ दिया, जिज्ञासु को एक नयी दिशा मिली। इन परंपरागत प्रचलित शब्द को गुरमति ने जो नयी रंगत दी यह गुरु साहिबान की एक मौलिक देन है :

हरि का सेवकु सो हरि जेहा ॥
भेदु न जाणहु माणस देहा ॥ (पन्ना १०७६)

प्रभु के साथ एकमिकता प्राप्त करने के उपरांत सेवक का आचार-व्यवहार तथा गुण आम मनुष्यों से अलग, अमर तथा आत्मिक निष्ठा वाले हो जाते हैं। गुरु 'शबद' द्वारा अपने

सेवक को अंदर-बाहर से संवार देता है। उसका व्यक्तित्व पूर्ण मनुष्य का हो जाता है। यहां सेवक तथा गुरु का रिश्ता प्यार वाला है न कि गुलाम तथा मालिक वाला। गुरु जी इस सिद्धांत की पुष्टि जगह-जगह पर करते हैं जैसा कि :

-कोई पुतु सिखु सेवा करे सतिगुरू की तिसु कारज सभि सवारे ॥ (पन्ना ३०७)

-सचु सेवहि सचु वणंजि लैहि गुण कथह निरारै ॥
सेवक भाइ से जन मिले गुर सबदि सवारे ॥ (पन्ना ३०८)

गुरमति ने तो सेवक व गुरु के सम्बंध को आगे बढ़ाते हुए रहस्यवाद की अवस्था तक पहुंचा दिया है। यह अवस्था बयान करने से परे है। परम निधान की अवस्था एक रहस्य, अनुभूति है, जिसका आनंद लिया जा सकता है, बयान नहीं किया जा सकता है। यह अवस्था सतिगुरु की मेहर होने पर प्राप्त होती है। गुरबाणी का प्रमाण है :

जिस नो हरि सुप्रसंनु होइ सो हरि गुणा रवै सो भगतु सो परवानु ॥
तिस की महिमा किआ वरनीऐ जिस कै हिरदै वसिआ हरि पुरखु भगवानु ॥
गोविंद गुण गाईऐ जीउ लाइ सतिगुरू नालि धिआनु ॥ रहाउ ॥
सो सतिगुरू सा सेवा सतिगुर की सफल है जिस ते पाइऐ परम निधानु ॥ (पन्ना ७३४)

ऊंचे व सच्चे आदर्शक सेवक पर जब गुरु बख़्शिश करता है तो सेवक के मात्र अतीत के पाप ही नहीं धोए जाते वर्तमान तथा भविष्य भी रौशन हो जाते हैं। यहां ही बस नहीं! सेवक की कई पुश्तें भी तर जाती हैं। गुरमुख खुद संसार समुद्र से तर जाता है तथा अपनी कई पुश्तों का भी उद्धार कर देता है। सेवक तथा गुरमुख की यह अवस्था एक समान है। सेवक को जमराज फिर नहीं पूछता अर्थात् उसका आवागमन का चक्कर समाप्त हो जाता है। गुरु पातशाह इस संदर्भ में फरमान करते हैं :

मेरे मन सेवहु अलख निरंजन नरहरि जितु सेविऐ लेखा छुटीऐ ॥ (पन्ना १७०)

सेवक का पांच चोरों से छुटकारा हो जाता है तथा उसको जीवन के हर क्षेत्र में मान-प्रतिष्ठा मिलती है :

आपे सतिगुरु मेलि सुखु देवै आपणां सेवकु आपि हरि भावै ॥
आपणिआ सेवक की आपि पैज रखै आपणिआ भगता की पैरी पावै ॥ (पन्ना ५५५)

सेवक की यह सेवा वाली घालना (परिश्रम) बहुत कठिन है, इस रास्ते पर चलने के लिए सिर तली पर रखना पड़ता है। पांव आगे रखकर फिर पीछे मुड़ने वाली बात नहीं होती। प्रभु-प्रेम का रिश्ता तब ही प्रवान चढ़ सकता है यदि प्रभु की नदर हो। यह अलूणी सिल है जो चाटना बहुत कठिन है। गुरु-फरमान इस सिद्धांत की पुष्टि भलीभांति करता है :

गुर पीरां की चाकरी महां करड़ी सुख सारु ॥
नदरि करे जिसु आपणी तिसु लाए हेत पिआरु ॥
सतिगुर की सेवै लगिआ भउजलु तरै संसारु ॥
मन चिंदिआ फलु पाइसी अंतरि बिबेक बीचारु ॥
नानक सतिगुरि मिलिऐ प्रभु पाईऐ सभु दूख निवारणहारु ॥ (पन्ना १४२२)

ऐसे आदर्श सेवक का खाना, पीना, पहनना सब पवित्र है और उसका घर पवित्र है अर्थात् भक्त दूसरे घर को भी पवित्र कर देता है। श्री गुरु रामदास पातशाह पावन फरमान करते हैं :

तिन का खाधा पैधा माइआ सभु पवितु है जो नामि हरि राते ॥
तिन के घर मंदर महल सराई सभि पवितु हहि जिनी गुरमुखि सेवक सिख अभिआगत जाइ वरसाते ॥ (पन्ना ६४८)

बाबा बुड्ढा जी का सिक्ख इतिहास में योगदान

*-बीबी गुरमीत कौर**

बाबा बुड्ढा जी गांव कत्थूनंगल ज़िला श्री अमृतसर में भाई सुग्घा (रंधावा) जी के घर माता गौरां जी के उदर से ७ कार्तिक, संवत् १५६३ (१५०६ ई) को पैदा हुए। आप जी के पिता ज़मींदार थे। बाबा बुड्ढा जी का बचपन का नाम बूड़ा था। बचपन में आप पशु चराने का कार्य करते थे। श्री गुरु नानक देव जी धर्म प्रचार करते हुए ऐसी जगह आए जहां बाबा बुड्ढा जी पशु चरा रहे थे। गुरु जी ने बाबा जी को अपने पास बुलाया तब बाबा बुड्ढा जी की आयु लगभग ११ वर्ष की थी। उन्होंने गुरु जी को विवेक, वैराग्य की बातें कर इतना प्रभावित किया कि गुरु जी ने कहा कि चाहे बूड़ा जी की आयु कम है परंतु तेज़ बुद्धि और ऊंचे विचारों के कारण ये ऊंची मानसिक अवस्था के मालिक हैं, बुड्ढे (बुजुर्ग, सियाने) हैं। उसी दिन से बूड़ा जी का नाम **'बुड्ढा'** हो गया। यह एक नये जीवन की शुरूआत थी।

जब बाबा बुड्ढा जी श्री गुरु नानक देव जी के संपर्क में आए तो वे उनके अनन्य सेवक बन गए। वे प्रभु-भक्ति में लीन रहने लगे। बाबा बुड्ढा जी श्री गुरु नानक देव जी के साथ करतारपुर आकर रहने लगे। गुरु जी के अंतिम समय तक आप करतारपुर में ही रहे। १५३० ई में जब आपकी आयु १७ वर्ष की थी आप का विवाह अच्चल गांव निवासी बीबी मिरोया जी के साथ हुआ। विवाह के एक वर्ष बाद ही आप की माता जी का देहांत हो गया और दो वर्ष बाद आपके पिता जी का भी देहांत हो गया। बाबा बुड्ढा जी के चार सुपुत्र थे-- भाई सुधारा जी, भाई भिखारी जी, भाई महिमू जी और भाई भाना जी। बाबा बुड्ढा जी सिक्ख जगत में अपनी सेवा-भावना और बहुपक्षीय शख़्सियत के कारण जाने जाते हैं। पूरी तरह से गुरु-घर के सेवक, समझदार और धैर्यवान सिक्ख बाबा बुड्ढा जी का दूसरे पातशाह से लेकर छठे पातशाह तक गुरुआई पद पर सुशोभित करने का फर्ज़ निभाना उनके सिक्ख पंथ में स्थान को दर्शाता है। भाई मरदाना जी के अतिरिक्त बाबा बुड्ढा जी का भी श्री गुरु नानक देव जी से विशेष स्नेह था। इसी कारण आप गुरु साहिब के ज्यादा नज़दीक थे। बाबा बुड्ढा जी श्री हरिमंदर साहिब के पहले ग्रंथी थे। सिक्ख इतिहास और धर्म से संबंधित कई ऐतिहासिक स्थानों और सरोवरों का शिलान्यास आपके द्वारा किया गया। आपका सिक्ख धर्म के विकास में योगदान सराहनीय है। त्याग की मूर्त बाबा बुड्ढा जी गुरु के सुख में ही अपना सुख मानते थे। उनका प्रत्येक कार्य गुरु-घर के लिए होता था। बाबा बुड्ढा जी की अपनी कोई भी लिखित प्राप्त नहीं होती, इस लिए बाबा जी के जीवन के बारे में जानने के लिए सिक्ख साहित्य ग्रंथों, जन्म-साखियों और वारां भाई गुरदास जी का अध्ययन ज़रूरी हो जाता है। भाई गुरदास जी ने अपनी ग्यारहवीं वार की चौदहवीं पउड़ी में फरमान किया है :

जिता रंधावा भला है बूड़ा बुढा इक मनि

***New Abadi Punder, G.T. Road Batala.**

धिआवै।

करतारपुर में रहते हुए बाबा बुड्ढा जी ने गुरु-घर की बहुत सेवा की। वह प्रतिदिन खेतों में कार्य करते और लंगर की सेवा करते। जब कभी गुरु जी करतारपुर से बाहर जाया करते तो वे सारी जिम्मेदारी बाबा बुड्ढा जी को सौंप कर जाया करते थे। बाबा जी हमेशा ही गुरु जी के हुक्म का पालन करने के लिए तैयार रहते थे। श्री गुरु नानक देव जी ने भाई लहिणा जी का दूसरे गुरु साहिब के रूप में चयन किया तो उन्हें गुरुआई पद पर सुशोभित करने संबंधी सारी रस्में बाबा बुड्ढा जी ने निभाई।

जब श्री गुरु नानक देव जी अकाल चलाना कर गए तो श्री गुरु अंगद देव जी खडूर साहिब आ गए, लेकिन बाबा बुड्ढा जी करतारपुर ही रहे। श्री गुरु नानक देव जी के बड़े सुपुत्र श्री चंद गुरुआई न मिलने के कारण श्री गुरु अंगद देव जी के साथ ईर्ष्या करने लगे। श्री गुरु अंगद देव जी श्री गुरु नानक साहिब के सुपुत्रों के साथ कोई विरोध नहीं करना चाहते थे। इसलिए उन्होंने अपने आपको माई भिराई जी के घर में एक कमरे में बंद कर लिया था। यहां पर गुरु जी भक्ति में लीन रहते थे। सिक्ख संगत गुरु जी को ढूंढने में असमर्थ थी, इसलिए उसने बाबा बुड्ढा जी के समक्ष विनती की। बाबा बुड्ढा जी ने श्री गुरु अंगद देव जी को ढूंढा और संगत को दर्शन देने के लिए विनती की। गुरु जी ने खडूर साहिब आकर संगत को दर्शन दिए।

श्री गुरु अंगद देव जी ने गुरमुखी लिपि के प्रचार-प्रसार के लिए भी सार्थक प्रयत्न किए श्री गुरु अंगद देव जी ने बाबा बुड्ढा जी को गुरमुखी लिपि के प्रचार के लिए नियुक्त किया। उस समय बहुत-से गुरसिक्ख गुरमुखी लिपि का ज्ञान न होने के कारण गुरबाणी का सही उच्चारण नहीं कर पाते थे। गुरमुखी पढ़ने के लिए बाबा बुड्ढा जी ने तलवंडी भाना में एक पाठशाला स्थापित की। खडूर साहिब में गुरु जी भी गुरमुखी लिपि का ज्ञान बच्चों को दिया करते थे। बीड़ साहिब में भी बाबा बुड्ढा जी ने यह कार्य जारी रखा।

जब श्री गुरु अंगद देव जी ने श्री गुरु अमरदास जी को गुरुआई सौंपी तब बाबा बुड्ढा जी ने ही गुरुआई की संपूर्ण रस्में निभाईं। श्री गुरु अमरदास जी ने सिक्खी का प्रचार-प्रसार गोइंदवाल साहिब में रहकर किया। श्री गुरु अमरदास जी भी श्री गुरु अंगद देव जी की संतान के साथ कोई विरोधता नहीं चाहते थे इसलिए वे गांव बासरके में आकर रहने लगे। सिक्ख संगत के कहने पर बाबा बुड्ढा जी ने श्री गुरु अमरदास जी को संगत को दर्शन देने के लिए विनती की। बाबा बुड्ढा जी की विनती स्वीकार करते हुए गुरु जी गोइंदवाल साहिब आकर रहने लगे।

श्री गुरु रामदास जी को गुरुआई देने की भी संपूर्ण रस्में बाबा बुड्ढा जी ने ही निभाईं। जब श्री गुरु रामदास जी ने सरोवरों की खुदवाई का कार्य आरंभ किया तो बाबा बुड्ढा जी को इन सब कार्यों का मुखी स्थापित किया गया। सरोवरों की संपूर्ण सेवा बाबा बुड्ढा जी द्वारा की गई। बाबा जी ने बहुत-से व्यवसाय के लोगों को यहां लाकर बसाया। जिस बेरी (बिर) के पेड़ के नीचे बैठकर बाबा बुड्ढा जी सरोवर की सेवा करवाया करते थे उस स्थान को बाबा बुड्ढा जी की बेरी के नाम से जाना जाता है।

श्री गुरु अरजन देव जी की गुरुआई देने की रस्में भी बाबा बुड्ढा जी ने ही निभाईं। बाबा बुड्ढा जी ने श्री गुरु अरजन देव जी की

(शेष पृष्ठ ३३ पर)

बंदी छोड़ दिवस

*-डॉ जगजीत कौर**

भाई गुरदास जी १३वीं वार की २५वीं पउड़ी में बताते हैं कि श्री गुरु नानक देव जी पारब्रह्म पूर्ण ब्रह्म रूप आप ही निगुर्ण और सगुण स्वरूप हैं। इस पारब्रह्म स्वरूप श्री गुरु नानक देव जी के शबद रूप अंग में समाहित हो श्री गुरु अंगद देव जी प्रतिष्ठित हुए, पुन: इन्हीं से अलख अभेउ श्री गुरु अमरदास जी और श्री गुरु अमरदास जी से धैर्य स्वरूप श्री गुरु रामदास जी। श्री गुरु रामदास जी से सत्य स्वरूप में स्थित अबिचल श्री गुरु अरजन देव जी और इसी अबिचल स्वरूप से अत्यंत महत कार्यों को करने वाले श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी प्रकट हए :

"पारब्रहम पूरण ब्रहम गुर नानक देऊ" और इन्हीं से परंपरा में *"हरिगोविंद गोविंद गुर कारण करणेउ"* भाई साहिब जी ने स्पष्ट कर दिया है कि आदि श्री गुरु नानक देव जी ही अब इस छठे स्वरूप में श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी होकर बड़े-बड़े महत्त्वपूर्ण कार्य करने के लिए अवतरित हुए हैं। गुरु-पद की व्याख्या गुरबाणी करती है और स्पष्ट करती है कि गुरु ही ज्ञान का दाता है, अज्ञान अंधकार को नष्ट करता है, भटके हुओं को सत्यमार्ग पर लगाता है, जन्म जन्मांतर का भय नाश करता है, भक्ति का मार्ग दिखाकर प्रभु ज्योति से मिलाप करवाता है। इसलिए वह अनंत गुणों का मालिक समर्थशाली सब कुछ करने में समर्थ होता है। भटके हुए प्राणियों को नसीहत है :

मत को भरमि भुलै संसारि ॥
गुर बिनु कोइ न उतरसि पारि ॥ (पन्ना ८६४)

भाई मनी सिंघ जी की भगत माला में ज़िक्र आता है कि एक बार श्रद्धालु सिक्खों को उपदेश करते हुए श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी ने बताया कि गुरु चार प्रकार के होते हैं १. भृंगी गुरु, २. पारस गुरु, ३. वामन चंदन गुरु और ४. दीपक गुरु भृंगी। एक कीड़ा होता है जो अपनी ही तरह के खास कीड़े को अपनी तरह बना देता है। पारस गुरु जैसे पारस केवल लोहे को ही बदल सकता है अन्य धातू को नहीं। चंदन आसपास के माहौल को ही सुगंधित करता है। इन तीनों का क्षेत्र सीमित है परंतु दीपक गुरु दीप की भांति प्रज्जवलित होता है। दीप से दीप जलते हैं। ज्ञान का विशद प्रसार होता है। ऐसे ही सिक्ख गुरु साहिबान ने *"अगिआनु अंधेरा कटिआ गुर गिआनु घटि बलिआ ॥"* ज्ञान के दीप जलाकर समस्त मानवता का भ्रम, अंधकार दूर किया। छठम् पातशाह श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने अपने परम तेज प्रताप से *"बंधन ते छुटकावै प्रभु मिलावै हरि हरि नामु सुनावै ॥"* अपनी मूल शक्ति चरितार्थ करते हुए गुलामी का दुख भोगते दीन, दरिद्र, दुखी राजाओं को बंधन मुक्त किया। मानव स्वतंत्रता का शंखनाद किया।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को जहांगीर बादशाह के आदेश पर ग्वालियर के किले में कैद किया गया। कैद करने के वैसे तो अनेक कारण बताए जाते हैं परम मुख्य कारण तो यही है कि बादशाह जहांगीर गुरु साहिब के तेज प्रताप की बातें सुनकर भयभीत हो उठा था। उसे अपने मुगल साम्राज्य की जड़ें हिलती प्रतीत हुईं। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने अपने पिता पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी की शांतमयी

**१८०१-सी, मिशन कम्पाऊण्ड, निकट सेंट मेरीज़ अकादमी, सहारनपुर (यू पी)-२४७००१, मो ९४१२४-८०२६६*

शहादत के पश्चात गुरु-पिता द्वारा ही भाई शिगांरु और भाई जैता जी द्वारा प्राप्त हुक्म कि अब समय आ गया है कि शस्त्र धारण किए जाएं। मीर द्वारा सत्ता की मीरी और पीरी द्वारा फकीरी की चरम शक्ति को प्रत्यक्ष किया जाये, केवल ग्यारह वर्ष की अवस्था १६०६ ई में गुरुआई पर विराजमान होते समय पारंपरिक सेली टोपी और माला को तोषे खाने में रखवा दिया और भाई बाबा बुड्ढा जी द्वारा गुरुआई की रस्में धारण करते समय दो कृपाणें पहनीं, एक मीरी की और दूसरी पीरी की। तमाम उपस्थित श्रद्धालुओं में घोषणा की कि आज से गुरु-घर में बढ़िया किस्म के अस्त्र-शस्त्र, अच्छी नस्ल के घोड़े और अपनी जवानियां भेंट की जाएं। १६०९ ई में श्री अकाल तख़्त साहिब की स्थापना की। देखते-देखते जन समूह जो श्री गुरु अरजन देव जी की शहादत से मायूस हुए थे, उनमें उत्साह की लहर दौड़ गई। युवावर्ग अस्त्र-शस्त्र संचालन के प्रशिक्षण में जुट गया। गुरुदेव स्वयं उन्हें प्रशिक्षित करते; वीरता के अखाड़े सज गए। युद्ध-कला में महारत हासिल करने की दौड़ लग गई। खेतों के हलों के झुंड कृपाणों में बदलने लगे। गुरुदेव स्वयं सेनानी वेश-भूषा में श्री अकाल तख़्त साहिब पर विराजमान होते। जनता समस्याएं लेकर आती, गुरुदेव फैसले करते सबको मान्य होते। राजनीति की चर्चा होती। वीर रसी वारें गायन की जातीं, लोगों में आज़ादी के प्रति जागरूकता और उत्साह भरा जाता। श्री अमृतसर में लोहगढ़ का किला उसारा गया, सेना की टुकड़ियां तैयार हुईं। गुरुदेव जी का *'दलि भंजन गुरु सूरमा बड जोधा बहु परउपकारी।'* बाना स्वरूप लोक प्रिय हो गया। गुरु-घरों में श्रद्धालु सिंघों की संख्या बढ़ने लगी। यही पर्याप्त था जहांगीर बादशाह को, अस्थिर करने को ऊपर से गुरु-घर के दोखी हिंदू जागीरदारों की साजिशें और आए दिन बादशाह के कान भरने। बेचैनी की अवस्था में बादशाह ने हुक्म जारी किया। गुरु साहिब ३१ दिसंबर, १६१२ के दिन श्री अमृतसर से दिल्ली को रवाना हुए। दिल्ली मजनूं का टिल्ला गुरुद्वारा में ठहरे। बादशाह के साथ शिकार पर गए। धौलपुर के जंगलों में गुरु साहिब ने बादशाह की उपस्थिति में शेर का शिकार किया। इसके पश्चात गुरुदेव जी को ग्वालियर के किले में नज़रबंद कर दिया गया। ग्वालियर का यह किला एक खास किस्म का किला था, जिसकी दीवारें बहुत ऊंची-ऊंची थी, कोई झरोखा, खिड़की नहीं, चिड़िया तक यहां नहीं फटक सकती थी। यहां उन कैदियों को रखा जाता था, जिन्हें सख़्त तसीहे दिए जाते थे। इस किले में ५२ राजे कैद थे। गुरु जी को यहीं रखा गया। गुरु जी की कैद का समय कुछ इतिहासकार केवल ४० दिन और कुछ १२ साल का लिखते हैं। लेकिन भट्ट वहीओं को इस दिशा में पहला प्रमाणिक स्रोत माना जाता है, जिसके अनुसार गुरु जी जनवरी, १६१३ को गिरफ्तार किए गए और २६ अक्तूबर १६१९ को बंदी छोड़ दाता की रिहाई हुई। गुरु जी छ: साल किले में कैद रहे। भट्टवही अनुसार "श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी महल छटा बेटा श्री गुरु अरजन देव जी का सोढी खत्री चक्क गुरु का परगणा निझरआला संवत सोला से छिहत्र कतक मासे क्रिशना पखे चौदस के दिंहु गुरु जी बावन राज्यों के गैल गुड़ गुआलीअर से बंदन मुक्त होए।"

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी के किले में रहने से माहौल खुशनुमा हो गया। प्रात: सायं सत्संग होता सभी नाम-बाणी, सिमरन में जुड़ते। जेल का दारोगा हरिदास तो गुरु जी का खास सेवक बन गया और वह बाहर की सभी गतिविधियां गुरु जी तक पहुंचाता। गुरु जी ने उस भोजन को खाने से इन्कार कर दिया जो उन्हें शाही कैदी समझकर अच्छे-अच्छे पकवान मिष्टान आदि युक्त दिया जाता। गुरु जी के अनन्य सेवक

भाई पिराणा जी और भाई जेठा जी किले के बाहर शहर में लोहे लकड़ी का काम करते थे वे अपने श्रम से कमाया सादा भोजन गुरु जी के लिए तैयार कर के लाते, जिसे गुरुदेव प्रेम सहित ग्रहण करते। श्री अमृतसर की संगत गुरु जी के दर्शनों के लिए बेचैन होती थी, इसलिए बाबा बुड्ढा जी संगत के जत्थे लेकर ग्वालियर आते वहां की स्थानीय सिक्ख संगत भी जुड़ती जत्थे किले की परिक्रमा करते हुए शबद चौकी करते। शबद चौकियों की प्रथा भी बाबा बुड्ढा जी ने बरक़रार रखी। गुरु साहिब की अनुपस्थिति में दरबार में शबद चौकियां चलती रहीं और यहां ग्वालियर की संगत शबद चौकी करती। पंजाब से बीच बीच में बाबा बुड्ढा जी, भाई गुरदास जी, भाई बल्लू जी, भाई पिराणा जी, भाई कीरतनीआ जी आदि आते रहते और गुरु जी के सम्बंध में जानकारी हासिल करते। हरिदास दरोगा पूरी सूचना देता इसके साथ सांई मीआं मीर जी और मल्लिका नूरजहां गुरु जी की रिहाई की कोशिश में थे किंतु जहांगीर बादशाह सितंबर, १६१३ से जनवरी १६१९ तक अजमेर गुजरात और सिंध की ओर रहा, जिससे ये सभी श्रद्धालु गुरु जी की रिहाई के बारे कुछ नहीं कर सके किंतु जैसे ही वह लौट कर आया सांई मीआं मीर और मल्लिका नूर जहां ने उसे एहसास कराया कि एक महान आध्यात्मिक प्रभु भक्त को कैद कर उसने ठीक नहीं किया है। जहांगीर को अपनी गलती का एहसास हुआ तो उसने तुरंत गुरु जी की रिहाई का आदेश जारी किया। दिल्ली से रिहाई का आदेश सुनते ही बंदी राजे गुरु जी के चरणों पर आ गिरे और प्रार्थना की कि महान गुरुदेव जी ही उनकी भी बंद खलासी करवा सकते हैं इस पर गुरु जी ने कहा कि वे तब तक किले से बाहर नहीं जायेंगे जब तक सारे कैदी रिहा नहीं किए जाते। बादशाह ने कहा कि जितने गुरुदेव जी का जामा पकड़कर बाहर जा सकते हैं चले जाएं। इस पर गुरुदेव जी ने दरोगा हरिदास को ऐसा जामा तैयार करवाने को कहा जिसकी ५२ कलियां हों और इस प्रकार एक-एक कली पकड़कर बावन राजे गुरुदेव जी के साथ मुक्त होकर आ गए। इसी कारण श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी को 'बंदी छोड़ दाता' कहा जाता है। किले से बाहर निकलते ही गुरु जी दरोगा हरिदास के घर गए। एक दिन उसके घर रहकर गुरुदेव जी आगरा पहुंचे। यहां बादशाह के साथ दो दिन रहे। बादशाह गुरुदेव जी से प्रभावित हुआ, दोनों में मित्रभाव बना। गुरुदेव जी ने पिता के घातक चंदू के बारे में भी बताया और चंदू को सिक्खों के हवाले किया गया सिक्खों ने चंदू को दंड दिया। फिर गुरुदेव जी श्री अमृतसर पहुंचे। जिस दिन गुरुदेव जी श्री अमृतसर पहुंचे उस दिन दीवाली थी। गुरु की संगत ने पूरे दरबार साहिब और पूरी नगरी को दीपों से सजाया, दीपमाला की तब से ही बाबा बुड्ढा जी द्वारा प्रचलित यह दिन 'बंदी छोड़ दिवस' के रूप में मनाया जाता है। इस ऐतिहासिक दिवस को गुरु की सिक्ख संगत श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी के श्री अमृतसर आगमन पर प्रसन्नता प्रकट करते हुए मनाती है। श्री दरबार साहिब श्री अमृतसर को आलौकिक ढंग से सजाया जाता है। हर सिक्ख की यह ख्वाहिश रहती है कि वह दीवाली के दिन श्री अमृतसर पहुंचे और आलौकिक जगमगाहट को अंर्तमन तक समेट ले क्योंकि दीवाली के जलते दीप सिक्ख के लिए केवल बाहर का प्रकाश नहीं है यह तो ज्ञान का रूहानी प्रकाश है जो उसके तन, मन को आनंदित कर उसे असीम आत्म लोक में पहुंचाता है।

--जह मात पिता सुत मीत न भाई ॥
मन ऊहा नामु तेरै संगि सहाई ॥
जह महा भइआन दूत जम दलै ॥
तह केवल नामु संगि तेरै चलै ॥ . . .
जिह मारग के गने जाहि न कोसा ॥

हरि का नामु ऊहा संगि तोसा ॥
जिह पैडै महा अंध गुबारा ॥
हरि का नामु संगि उजीआरा ॥
जहा पंथि तेरा को न सिञानू ॥
हरि का नामु तह नालि पछानू ॥ (पन्ना २६४)

गुरमति में मनुष्य के लिए प्रभु का नाम ही दीपक है जो उसके दुखों का नाश करता है जमों के भय से मुक्त करता है, नाम ही पिंड पतल है पावन तीर्थ, गंगा, बनारस है अन्य किसी पुरोहित ब्राह्मण के माध्यम से पिंड निर्मित कराने की आवश्यकता नहीं है। नाम आराधन द्वारा प्रभु से प्राप्त बख़्शिश ही प्राणी का पिंड दान है :

दीवा मेरा एकु नामु दुखु विचि पाइआ तेलु ॥
उनि चानणि ओहु सोखिआ चूका जम सिउ मेलु ॥ . .
पिंडु पतलि मेरी केसउ किरिआ सचु नामु करतारु ॥
ऐथै ओथै आगै पाछै एहु मेरा आधारु ॥ . .
नानक पिंडु बखसीस का कबहूं निखूटसि नाहि ॥
(पन्ना ३५८)

यह दीप है शबद का जो सतिगुरु जी द्वारा बख़्शिश किया गया है, जिस दीप के प्रकाशित होते ही समस्त अविद्या, अज्ञान का अहंकार दूर हो जाता है और ज्ञान मणियों का प्रकाश अंर्तमन को दीप्तिमान कर देता है :

सतिगुर सबदि उजारो दीपा ॥
बिनसिओ अंधकार तिह मंदरि रतन कोठड़ी खुल्ही अनूपा ॥ (पन्ना ८२१)

सिक्ख गुरु साहिबान ने ऐसे ज्ञान दीप प्रज्जवलित किए इसीलिए तो भट्ट साहिबान गुरु प्रशास्ति करते कहते हैं :

जह कह तह भरपूरु सबदु दीपकि दीपायउ ॥
जिह सिखह संग्रहिओ ततु हरि चरण मिलायउ ॥
(पन्ना १३९५)

सर्वव्यापी प्रभु का शबद रूप नाम तत्व ज्ञान का दीपक गुरु साहिबान द्वारा दीपित हुआ, जिसे श्रद्धालु शिष्य ग्रहण कर परमात्मा के चरणों से लिवलीन हो जाते हैं परंतु इस दीप को निरंतर जलते रहने के लिए इसमें घाल कमाई, सुमिरन-सेवा का तेल बराबर डालना होगा अन्यथा :

बिनु तेल दीवा किउ जलै ॥१॥ रहाउ ॥
पोथी पुराण कमाईऐ ॥
भउ वटी इतु तनि पाईऐ ॥
सचु बूझणु आणि जलाईऐ ॥
इहु तेलु दीवा इउ जलै ॥
करि चानणु साहिब तउ मिलै ॥ (पन्ना २५)

बिना तेल के यह ज्ञान-दीप कैसे जल सकता है? इसके लिए धर्म ग्रंथों का अध्ययन कर गुरु-उपदेश के अनुसार जीवन युक्ति बनाएं घाल कमाई करें, यह है तेल प्रभु भय की इसमें बत्ती डालें स्थिर सत्य-स्वरूप प्रभु के ज्ञान ऊर्जा अग्नि से इसे जलाए तब यह दीप जलता रहेगा अंतरात्मा को प्रकाशित कर प्रभु मिलन का मार्ग प्रशस्त करता रहेगा। यह स्थाई प्रकाशमान दीप है वह दीवाली का दीप नहीं, जैसा भाई गुरदास जी बताते हैं :

दीवाली दी राति दीवे बालीअनि।
तारे जाति सनाति अंबरि भालीअनि।
फुलां दी बागाति चुणि चुणि चालीअनि।
तीरथि जाती जाति नैण नीहालीअनि।
हरि चंदउरी झाति वसाइ उचालीअनि।
गुरमुखि सुख फल दाति सबदि सम्हालीअनि ॥६॥
(वार १९:६)

दीवाली के दीप थोड़ी देर प्रकाश देकर बुझ जाते हैं। फूल, अंबर के तारे, तीर्थयात्री, हरिचंदउरी सभी का अस्तित्व क्षणिक है किंतु नाम की दात गुरमुख को स्थाई सुख, फल प्रदान करती है। सदैवकालीन आनंद से जोड़ती है। नाम, प्रभु-सिमरन के दीप गुरमुख के लिए स्थायी सुख का स्रोत है। 

दीवाली का ऐतिहासिक पक्ष

*-स. निरवैर सिंघ अरशी**

भारत त्योहारों का देश है जहां प्रतिदिन स्थानीय तथा मौसमी त्योहार पूरी सज-धज से मनाए जाते हैं। इन त्योहारों में से दीवाली को विशेष महत्त्व प्राप्त है। दीवाली केवल भारतीय ही नहीं बल्कि इंटरनैश्नल त्योहार है तथा इसके साथ कई रिवायतें जुड़ी हुई हैं। नेपाल देश में दीवाली पांच दिन तक मनाई जाती हैं। मिसर में इसको 'लचनोन' अथवा रौशनी के त्योहार का नाम दिया गया है। इस दिन विशेष प्रकार की मशालों में तेल भरकर सारी रात जलाया जाता है तथा खास जश्न किए जाते हैं। यहूदी लोग जो 'फीस्ट ऑफ डेडिकेशन' मनाते हैं, यह भी दीवाली के त्योहार की ही याद ताज़ा करता है। आयरलैंड के निवासी इस त्योहार का स्वागत दीए व मोमबत्तियां जलाकर करते हैं तथा अपने सगे-सम्बंधी, सज्जनों-मित्रों को मिलते हैं। चीन में इस रात से ही वर्ष शुरू होता है, जिसकी अनेक प्रकार की खुशियां मनाई जाती हैं। इंडोनेशिया में भी इस दिन विशेष रौनक व उत्सुकता देखने को मिलती है, नगरों के गली-बाज़ार दीयों की रौशनी से जगमगा उठते हैं।

भारत में दीपमालिका, दीपावली, दीवाली या धंन त्रौदस का त्योहार प्रचीन काल से मनाया जाता है। द्राविड़ लोग इस दिन अपने धन-दौलत की प्रदर्शनी किया करते थे तथा अमीर लोग एवं राजा आदि वर्ष भर में लोक भलाई के लिए किए गए खर्च का हिसाब-किताब देते थे। आर्य लोग आए तो इन्होंने द्राविड़ों को चाहे दक्षिण प्रदेशों में भगा दिया परंतु उनके रीति-रिवाज़ों व प्रभाव को प्रत्यक्ष ग्रहण कर गए। इन्होंने दीवाली की रात लक्ष्मी की पूजा के रूप में मनानी शुरू कर दी। जिसको वो धन की देवी कहते हैं। समय की रफ़तार से घटनाएं घटित होती गईं तथा दीवाली मनाने में विस्तार होता गया। इस दिन ही भगवान श्री रामचंद्र जी १४ वर्ष का वनवास काटकर के उपरांत अपने भ्राता लक्ष्मण तथा धर्म पत्नी सीता जी सहित आयोद्धया वापिस आए थे तथा नगर निवासियों ने अपार खुशी में घर-घर घी के दीये जलाए थे।

विषकर्मा जी तथा जैन मत के संस्थापक तथा प्रमुख आचार्य श्री वर्धमान महामीर का जन्म उत्सव होने के कारण भी दीवाली खास महत्ता रखती है। इसी महान दिन पर राजा बिक्रमाजीत (जिनके नाम पर बिक्रमी संवत् प्रारंभ हुई) राजगद्दी पर बैठे थे। इसी दिन श्री कृष्ण जी ने अपने मामा कंस को मारकर अपने माता-पिता पर किए जुल्म का बदला लिया था। श्री हनुमान जी का जन्म भी इसी रात का ही बताया जाता है। शिव जी, पार्वती तथा पांडवों के साथी भी दीवाली के सम्बंध में घटनाएं जुड़ी हुई हैं।

दीवाली का सिक्ख इतिहास से भी गहन सम्बंध जुड़ गया है। इस दिन घटित हुई कुछ विशेष घटनाएं हमें हर वर्ष गौरवशाली सिक्ख

**C/o अरशी गिफ्त सेंटर, नवीं आबादी, श्री अनंदपुर साहिब-१४०११८, मो. +९१९८८८६-३६४१३*

इतिहास की याद ताज़ा करवाती हैं, खालसई खून खौल उठता है तथा देश, धर्म व मानवता के लिए कुछ कर गुज़रने की भावना अंगड़ाईयां लेने लगती है। सिफती के घर श्री अमृतसर की दीवाली पूरे भारत में एक खास आक्रर्षण रखती है। इस दिन गुरु की नगरी में विशेष उत्साह तथा नज़ारा देखने में आता है। श्री हरिमंदर साहिब तथा श्री अकाल तख़्त साहिब में भरपूर दीपमाला की जाती है और सारी रात खूब आतिशबाज़ी चलती है; मोमबत्तियां, दीये तथा रंग-बिरंगे लाटुओं की कतारों के अकस श्री गुरु रामदास सरोवर में झिलमिल-झिलमिल करते एक ऐसा आलौकिक नज़ारा पेश करते हैं कि सारा वातावरण ही एक अजीब से नशे में मदहोश हो जाता है। ऐसे लगने लगता है कि जैसे स्वर्ग से कुल देवी-देवते इकट्‌ठा होकर श्री गुरु रामदास सरोवर में डुबकी लगाने तथा (चौथे) नानक निरंकारी के नूरानी दरबार के चरण पसारने के लिए आ पहुंचे हों इस समय *"डिठे सभे थाव नहीं तुधु जेहिआ ॥"* की पंक्ति प्रत्यक्ष लक्षित होती है।

भाई गुरदास जी का वाक्य-- *"दीवाली दी राति दीवे बालीअनि।"* इस बात का प्रत्यक्ष प्रमाण है कि गुरु साहिबान के समय पंजाब में दीवाली मनाने का रिवाज़ आम हो चुका परंतु सिक्खों में विशेष उत्साह से दीवाली मनाने का कारण सिक्ख इतिहास की निम्नलिखित प्रमुख घटनाएं बनीं।

श्री गुरु अरजन देव जी की महान शहादत के उपरांत श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने ज़ालिम हकूमत से दो हाथ करने का दृढ़ संकल्प किया। श्री अकाल तख़्त साहिब का निर्माण हुआ सिक्खों को सम्मुख होने और शस्त्र या घोड़े आदि की भेंट लाने के फरमान हुए। ढाड्यिों ने शूरवीरों की जंगी वारें रोज़ाना दीवान में गानी आरंभ कर दीं। पंजाब के शूरवीर उत्साह में आकर गुरु जी फौज में भर्ती होने लगे। घुड़सवारी, तीरंदाज़ी, नेज़ेबाज़ी आदि के मुकाबले होने लगे। नगाड़ों की ध्वनि, सच्चे पातशह के हाथ पर सजता बाज़ तथा शीश पर शोभनीक ताज आदि ने सिक्खों के मनों पर हीनता की भावना दूर करके उनको दिलेर, उत्साही तथा शूरवीर बना दिया। समय की हकूमत में सब कुछ कैसे बर्दाश्त कर सकती थी? उसने गुरु जी को नज़रबंद करने में ही अपनी भलाई समझी। गुरु जी को ग्वालियर के किले में बंदी बना लिया गया, जहां पर पहले ही कई राजपूत राजा हकूमत का विरोध करने के दोष में नज़रबंद किए हुए थे।

गुरु जी की आकर्षण नज़रबंदी के विरुद्ध सिक्खों में रोष की लहर पैदा होना प्राकृतिक था। सिक्ख जत्थे बाबा बुड्‌ढा जी की अगुवाई में ग्वालियर जाते तथा नमस्कार करके वापिस आ जाते। हकूमत को जल्दी ही अपनी गलती महसूस हो गई। साई मीआं मीर जी, नूरजहां तथा वज़ीर खां ने भी ज़ोर दिया। अत: गुरु जी की रिहाई का हुक्म जारी हो गया। गुरु जी ने अपने साथ राजपूत राजाओं की रिहाई की भी मांग की तो जहांगीर ने हुक्म दिया कि जो राजा गुरु जी का चोला पकड़कर निकल सकते हों, वो आज़ाद हो जाएंगे गुरु जी ने बावन कलियां वाला विशेष चोला पहना तथा राजाओं को छुड़ाकर बाहर ले आए। इस दिन से ही आपका नाम 'बंदी छोड़ दाता' पड़ गया। जब आप जी रिहा होकर दीपावली के दिन श्री अमृतसर पहुंचे तो सारे शहर में भारी दीपमाला की गई, एक दूसरे को मुबारकबाद दी गयी, मिठाईयां बांटी गईं तथा आतिशबाज़ी चलाई

गई। उस दिन से श्री अमृतसर में प्रत्येक वर्ष दीपावली के दिन विशेष दीवान होने लगे तथा खुशियां मनाई जाने लगीं।

कसूर का नवाब एक गरीब ब्राह्मण की पत्नी को ज़ब्री छीनकर ले गया। उस ब्राह्मण व्यक्ति ने खालसा दल को पुकार की। नवाब से ब्राह्मण व्यक्ति की पत्नी को छुड़ाने का फैसला दीवाली के दिन ही श्री अकाल तख़्त साहिब पर एकत्र हुए खालसा पंथ ने किया। फिर सिंघ कसूर पर हमला बोलकर उस औरत को छुड़ा लाए तथा ब्राह्मण के हवाले किया।

बाबा बंदा सिंघ बहादुर की शहीदी के पश्चात मुगलीय हकूमत की सख़्ती का दौर था। नवाबी की पेशकश करने के उपरांत भी लाहौर दरबार सिक्खों को अपने हक में न कर सका। सिक्खों के इकट्‌ठा होने पर तथा श्री हरिमंदर साहिब सरोवर में स्नान करने की पाबंदी थी। श्री हरिमंदर साहिब के मुख्य ग्रंथी भाई मनी सिंघ जी ने सिक्खों को एकत्र करने के लिए दीवाली का ही दिन उचित समझा तथा सूबा ज़करिया ख़ान को पांच हज़ार रुपए कर (टैक्स) देना मानकर दीवाली, श्री अमृतसर में मनाने की मंज़ूरी ले ली। हाकिमों ने भी सोचा कि इसी बहाने सिक्ख एकत्र हो जाएंगे और हमारी इनको जंगल-बीयाबानों में ढूंढकर मार-मुकाने का काम आसान हो जाएगा। भाई साहिब ने सिक्खों को इस साजिश की ख़बर कर दी। भाई मनी सिंघ जी का भेजा संदेश पाकर सिक्खों ने श्री हरिमंदर साहिब आने का प्रोग्राम मुलतवी कर दिया। हकूमत के सब मनसूबे धरे-धराए रह गए। दीवाली का मेला चाहे नहीं था मनाया गया परंतु बौखलाए हुए हाकिमों ने फिर भी भाई साहिब से पांच हज़ार रुपए की रक्म मांगी।

भाई मनी सिंघ जी ने रक्म भरने से साफ इन्कार कर दिया और कहा कि जब हकूमत ही समझौते से मुकर गई तो हम पैसे क्यों भरें? परिणामस्वरूप भाई साहिब को कैदी बनाकर लाहौर दरबार में पेश किया गया। टैक्स भरने, इस्लाम कबूल करने अथवा मृत्यु के लिए तैयार होने का फरमान सुनाया गया। भाई मनी सिंघ जी ने न टैक्स भरा और न ही इस्लाम कबूल किया, वो शहादत देने के लिए तैयार हो गए। जल्लादों ने भाई साहिब को बंद-बंद काटकर शहीद करने का हुक्म दे दिया। भाई साहिब अडोल तथा शांतमयी रहकर गुरबाणी का जाप करते रहे। जल्लाद आया तो उसने पहले भाई साहिब की कलाई को काटना चाहा। भाई साहिब ने जल्लाद का हाथ पकड़कर कहा, ऐसे नहीं। जैसे हुक्म हुआ है वैसे ही बंद-बंद काटो। मुझे इसी में ही आनंद की प्राप्ति होगी। कहने से तात्पर्य कि पहले अंगुली से काटना आरंभ करो।

अरे जलाद खुदाइ वासते, मेरा कहया कमावो।
और निमक जिसका तुम खैहै उसका हुकम बजावो।
जोड़ जित कहैं मेरे तन मै, जुदे जुदे सभ काटो।
जोड़ छोड़ जे इक भी दैहो, तौ अरथत मै डाटो।
इम कहि फते बुलाके सिंघ जी, दहिनी भुजा पसारी।
इक इक उंगली त्रै त्रै थावै, तै कटवाई सारी।
पुन पहुचा कूहणी अर मोढा, सैनत साथ कटाए।
आप रहयो श्री जपुजी पढ़दे, दरद न ज़रा जताए।

भाई मनी सिंघ जी ने शरीर का बंद-बंद कटवाकर ऐसी मिसाल कायम की, जिसका

दुनिया के इतिहास में कहीं भी सानी नहीं मिलता।

दीवाली से सम्बंधित एक और विशेष घटना बाबा दीप सिंघ जी की शहादत की है। बाबा दीप सिंघ जी कलगीधर पातशाह के हजूरी सेवक थे तथा शहीदी मिसल के प्रर्वत्तक थे। आप जी ने विद्या, अमृत की जाचना तथा श्री गुरु ग्रंथ साहिब की प्रतिलिपियां तैयार करने की प्रेरणा भाई मनी सिंघ जी से प्राप्त की। बाबा बंदा सिंघ बहादुर के साथ मिलकर अनेक युद्ध किए।

बाबा बंदा सिंघ बहादुर की शहादत के बाद मुगलीय तअस्व तथा जुल्म की आंधी आई। भाई तारा सिंघ डलवां भाई मनी सिंघ, भाई तारू सिंघ, भाई बोता सिंघ, भाई गरजा सिंघ, भाई मताब सिंघ मीरांकोट, भाई सुबेग सिंघ तथा उनके नौजवान पुत्र भाई शाहबाज़ सिंघ, वीर हकीकत राय आदि अनेकों सिंघों की शहीदियों के बाद ज़ालिमों का कहर शांत न हुआ। मीर मंनू, ज़करिया ख़ान, यहीआ ख़ान, नादर शाह, तैमूरशाह, जसपत राए, लखपत राए जैसे हुक्मरानों ने सिक्खों का खूब कत्लेआम किया, उपरांत अब्दाली का समय आया। उसने धर्म-स्थानों के अपमान का घृत कार्य आरंभ किया। श्री हरिमंदर साहिब का कुछ हिस्सा ध्वस्त कर तथा सरोवर को मिट्टी से पाट दिया। गुरु के शूरवीर सिंघ अपमान को कैसे बर्दाश्त कर सकते थे! सिंघों का खून खौल उठा, श्री दमदमा साहिब, तलवंडी साबो में निवास कर रहे बाबा दीप सिंघ जी ने अब्दाली की फौज को भगाने के लिए तैयारी कस ली तथा सिंघों की फौज लेकर श्री अमृतसर की ओर चल दिए। रास्ते में बाबा जी के साथ अन्य सिंघ भी मिलते गए। श्री अमृतसर के पास आकर बाबा दीप सिंघ जी एक लंबी लकीर (रेखा) खिंच दी और कहा कि जिसने धर्म-युद्ध में जान की परवाह किए बिना जूझना हो वो हमारे साथ आ जाए। खालसई फौज *"कबीर मेरा मुझ महि किछु नही जो किछु है सो तेरा ॥ तेरा तुझ कउ सउपते किआ लागै मेरा ॥"* तथा *"कबीर मुहि मरने का चाउ है मरउ त हरि कै दुआर ॥"* आदि पंक्तियों चाव व उत्साह से गायन करती हुई गुरु की नगरी, श्री अमृतसर की ओर चल दी। दुआबे से तथा श्री अनंदपुर साहिब से बाबा गुरबख़्श सिंघ जी भी अपने जत्थे तथा अन्य सिंघों सहित शहीदी दल में आ मिले। उधर से लाहौर का फौजदार जहान ख़ान भी पठानों का भारी लश्कर और जंगी सामान लेकर मुकाबले के लिए पहुंच गया। श्री अमृतसर से १० किलोमीटर दूर गांव गोहलवड़ के पास दोनों दलों की भारी टक्कर हुई :

दीन मज़ब दा मच्चिआ जंग भारा, लग्गे सूरमे अग्ग वरसाण भाई।

तड़ा ताड़ कड़ा काड़ होण लग्गी, काल नच्चिआ सिरां ते आण भाई।

तीरां गोलीआं दा मींह वरन लग्गा, दड़ा दड़ डिग्ग रहे जवान भाई।

सिंघ कहिण अकाल अकाल उच्ची, नाहरे ऐली देवण मुसलमान भाई।

अताई ख़ान भी भारी सेना लेकर मुकाबले के लिए आ गया। सिंघों में धर्म-युद्ध में जूझने व शहीन होने का जोश भरा था। भारी संख्या में सिंघों ने शहीदियां प्राप्त कीं। बाबा नौध सिंघ जी चब्बे के पास शहीदी पा गए। पठान कमांडर जमाल खां से बाबा दीप सिंघ जी की भारी टक्कर हुई। दोनों पर वार एक समय ही हुए। बाबा दीप सिंघ जी जख़्मी हो गए परंतु

"मरउ त हरि कै दुआर ॥" की भावना ने उनका हौसला बुलंद रखा और ज़ख़्मी हालत में भी शत्रु दल को चीरते हुए श्री हरिमंदर साहिब के बराबर बढ़ते गए। कुल मुल्क बाबा दीप सिंघ जी शूरवीरता देखकर दातों तले उंगलियां दबाता रह गया। बाबा जी ने गुरु-दरबार में पहुंचकर शहीदी प्राप्त की। यह दिन ११ नवंबर, १७५७ ई, मुताबिक ३० कार्तिक, संवत् १८१८ दीवाली का दिन था।

१७६२ ई. की दीवाली भी सिंघों ने ऐसे ही भगदड़ में मनाई। फरवरी, १७६२ ई. में बड़ा घल्लूघारा हुआ। जिसमें स. करम सिंघ हिस्टोरियन आदि के अंदाज़े के मुताबिक ५० हज़ार के लगभग सिंघों ने शहीदियां प्राप्त कीं। लेकिन हकूमत खालसई जोश को फिर भी ठंडा नहीं कर सकी। ज्वाला जलती रही। अब्दाली ने श्री अमृतसर का फिर अपमान किया। श्री हरिमंदर साहिब को बारूद से उड़ा दिया। सरोवर पाट दिया। लाहौर शहर के दरवाज़ों तथा दीवारों पर सिक्खों के सिरों के मीनार बनाए गए। मस्जिद को खालसे के खून से धोया गया। कार्तिक का महीना आ पहुंचा था। लगभग ६० हज़ार सिंघों ने १७६२ की दीवाली श्री अमृतसर में मनाने के लिए कूच किया तथा भारी उत्साह से जोड़मेला मनाया। अब्दाली लाहौर से धावा बोलकर आया। घमासान जंग हुई तथा मैदान खालसा पंथ के हाथ में रहा। अपनी बेइज़्ज़ती और निराशा न सहन करते हुए अब्दाली दिसंबर के महीने ही अफगानिस्तान चला गया।

सन् १७६४ ई. तक स. जस्सा सिंघ आहलूवालिया की अगुवाई तले खालसा दल ने जलंधर तथा दुआबे पर कब्ज़ा कर लिया। १७६४ ई. की दीवाली खालसा पंथ ने भारी उत्साह से श्री अमृतसर पहुंचकर मनाई। काबुल से आई जहान ख़ान की फौज को भी कड़े हाथ दिखाए।

दीवाली सदा ही खालसे के लिए नयी उमंगे, भावनाएं व ऐतिहासिक घटनाएं लेकर आती रही। यूं कह लिया जाए सिंघों के कार्तिक की अमावस को घी, तेल की जगह खून के दीये जलाकर तथा बत्ती की जगह जानें बिछाकर रौशन किया है तथा इस त्योहार की अद्वितीय देन है।

यदि आज हम शहीदों की कुर्बानियों से जान-बूझकर ओझल हो जाएं तो यह हमारी बहुत बड़ी गलती होगी। कहां पुरातन सिंघ सिक्खी की आन-शान को बरक़रार रखने के लिए हंसकर जानें कुर्बान करते रहे, बंद-बंद कटवाते समय भी निश्चिंत रहे और कहां हमारी आज की नौजवान पीढ़ी जो अपने गौरवमयी विरासत को भुलाकर सिक्खी से बेमुख होती जा रही है और गुरु साहिबान द्वारा बख़्शिश अमोलक निधियों की तिलांजलि दे रही है।

आओ! हम शहीदों द्वारा बनाए गए रास्ते पर चलने का दृढ़ संकल्प करें और फिर देखना पंथ की हर तरफ चढ़दी कला और हर मैदान में फ़तहि होगी।



स. जस्सा सिंघ आहलूवालिया

*-डॉ. कशमीर सिंघ 'नूर'**

नवाब कपूर सिंघ और स. जस्सा सिंघ आहलूवालिया का नाम सिक्ख योद्धाओं में सम्माननीय व विशेष स्थान रखता है। शिरोमणि पंथ अकाली बुड्ढा दल के तृतीय सरदार (प्रमुख) नवाब कपूर सिंघ द्वारा इस फ़ानी दुनिया को अलविदा कह देने के बाद स. जस्सा सिंघ आहलूवालिया जी को पंथ का जत्थेदार (अगुआ) स्वीकार किया गया। उनका जन्म सन् १७१८ ई. को पिता स. बदर सिंघ के गृह में माता जीवन कौर की कोख में से गांव आहलू, ज़िला लाहौर (पाकिस्तान) में हुआ। छोटी आयु में ही पिता जी का साया सिर पर से उठ गया। उनकी माता जीवन कौर सिक्ख संगत के साथ दिल्ली में चली आईं और माता सुंदरी जी की सेवा में जुट गईं। वहीं पर बालक जस्सा सिंघ ने कीर्तन व सेवा करने का आशीर्वाद प्राप्त किया। माता सुंदरी जी के संरक्षण में ही सिक्ख विचारधारा, गुरमति, आत्मिक, सामाजिक, बहुपक्षीय शिक्षा तथा भिन्न-भिन्न भाषाओं का ज्ञान प्राप्त किया। दिल्ली से चलने के वक्त माता सुंदरी जी ने बालक जस्सा सिंघ को दशमेश पिता श्री गुरु गोबिंद सिंघ के कर कमलों का स्पर्श-प्राप्त शस्त्र, तलवार, तीर-कमान, गुर्ज (गदा) आदि बख़्शिश किए।

स. जस्सा सिंघ आहलूवालिया जी अपनी माता जी, मामा जी स. बाघ सिंघ हलोवालिया, करतारपुर (जलंधर) के साथ जत्थेदार नवाब कपूर सिंघ के पास पहुंच गए। नवाब कपूर सिंघ स. जस्सा सिंघ जी की शख़्सियत (व्यक्तित्व) से प्रभावित हुए बिना न रहे। उनके कहने पर माता जीवन कौर जी ने अपने सुपुत्र को उन्हीं के पास छोड़ दिया।

नवाब कपूर सिंघ ने स. जस्सा सिंघ आहलूवालिया को घुड़सवारी, तेग चलाने की कला, नेज़ाबाज़ी और तीरंदाज़ी आदि की शिक्षा दिलवाई। स. जस्सा सिंघ जी यह प्रशिक्षण प्राप्त करने के साथ-साथ संगत में पंखा झुलाने और बर्तन साफ करने की सेवा भी खूब करते।

युवा होने पर उन्हें नवाब कपूर सिंघ जी ने अमृतपान करवाया और रहित-मर्यादा निभाने की ताकीद की। फिर नवाब जी ने उन्हें खालसा फ़ौज के घोड़ों को खुराक उपलब्ध करने की सेवा सौंप दी। इस सेवा को स. जस्सा सिंघ जी ने तन-मन एवं लग्न के साथ निभाया। आग पर तपकर ही सोना कुंदन बनता है और स. आहलूवालिया जी का व्यक्तित्व भी कुंदन बन रहा था। उन्होंने नवाब कपूर सिंघ जी द्वारा छेड़े गए युद्ध-अभियानों में भाग लेना शुरू कर दिया और अपने युद्ध-कौशल एवं शूरवीरता का लोहा मनवाया। दुश्मन उनका नाम सुनकर कांपने लग जाते थे। इस तरह स. जस्सा सिंघ आहलूवालिया की उस समय के महान् सिक्ख सरदारों अर्थात् जरनैलों की प्रथम पंक्ति में शामिल हो गए।

युद्ध-अभियानों के दौरान स. जस्सा सिंघ आहलूवालिया ने यहां एक और अफ़गान पठानों को छटी का दूध याद दिला दिया, वहीं दूसरी ओर सन् १७६१ ई. को ज़ालिम अहमद शाह

**बी-एक्स ९२५, मोहल्ला संतोखपुरा, होशियारपुर रोड, जलंधर-१४४००४, फोन : ९८७२२-५४९९०*

अब्दाली द्वारा अगवा की गई २२०० हिंदू स्त्रियों को छुड़वाकर सम्मान सहित उनके घरों में पहुंचाया। सन् १७६१ को ही खालसा फ़ौजों ने लाहौर पर विजय प्राप्त की और इस खुशी में स. जस्सा सिंघ आहलूवालिया को पंथ का पहला बादशाह (सम्राट) 'सुल्तान-उल-कौम' घोषित किया गया। 'सुल्तान-उल-कौम' ने सिक्खों की स्वतंत्रता की घोषणा की और सिक्ख गुरु साहिबान के नाम पर सिक्के (मुद्राएं) जारी किए।

महान् योद्धा स. जस्सा सिंघ आहलूवालिया जी नवाब कपूर सिंघ द्वारा फ़ानी दुनिया को अलविदा कह जाने के बाद शिरोमणि पंथ अकाली बुड्ढा दल के चतुर्थ जत्थेदार (अगुआ) बने। उन्होंने बतौर जत्थेदार श्री अकाल तख़्त साहिब सिक्ख कौम की आगवानी की। सन् १७८३ ई की ११ मार्च को सिक्ख सरदार स. जस्सा सिंघ रामगढ़िया, स. बघेल सिंघ, स. भाग सिंघ और स. गुरदित्त सिंघ के साथ मिलकर दुश्मनों को पराजित कर लाल किला (दिल्ली) पर खालसा पंथ का केसरी झंडा फहराया। फिर इस बहादुर सिक्ख योद्धा 'सुल्तान-उल-कौम' स. जस्सा सिंघ आहलूवालिया को भारत का सम्राट घोषित किया गया। आखिर २० अक्तूबर, १७८३ ई को सिक्ख कौम को बुलंदियों पर पहुंचाकर स. जस्सा सिंघ आहलूवालिया इस संसार से कूच कर गए। ❁

बाबा बुड्ढा जी का सिक्ख इतिहास में योगदान

(पृष्ठ २२ का शेष)

सहनशीलता की प्रशंसा करते हुए कहा था कि उनके जैसा कोई नहीं है। इस बात का प्रिथीचंद ने बहुत विरोध किया। बाबा बुड्ढा जी ने भाई गुरदास जी के साथ मिलकर प्रिथीचंद की किसी भी चाल को कामयाब नहीं होने दिया। बाबा जी ने भाई गुरदास जी के साथ मिलकर श्री गुरु अरजन साहिब का हर तरह से साथ दिया। गुरु जी ने बाबा बुड्ढा जी को श्री अमृतसर में सिक्खी के प्रचार-प्रसार का कार्य सौंपा। बाबा जी ने मसंद-प्रथा को दृढ़ करवाया।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी की अक्षरी-विद्या और शस्त्र-विद्या की जिम्मेदारी भाई गुरदास जी और बाबा बुड्ढा जी को सौंपी गई। श्री गुरु अरजन देव जी की शहीदी के उपरांत बाबा बुड्ढा जी ने श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को मीरी और पीरी की दो कृपाणें पहनाईं। श्री अकाल तख़्त साहिब का निर्माण-कार्य श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के हुक्म से बाबा बुड्ढा जी और भाई गुरदास जी ने संपूर्ण किया। जब श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ग्वालियर के किले में कैद थे तो माता गंगा जी ने बाबा बुड्ढा जी को गुरु साहिब की ख़बरसार लेने के लिए भेजा। बाबा बुड्ढा जी और साईं मीयां मीर जी के प्रयत्नों सदका गुरु जी किले से रिहा हुए थे। बाबा बुड्ढा जी १६३१ ई में रमदास में अकाल चलाना कर गए। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने बाबा बुड्ढा जी की अंतिम रस्में अपने हाथों से निभाईं।

सारी उम्र बाबा बुड्ढा जी गुरु साहिबान की सेवा श्रद्धालु बनकर करते रहे। आप गुरमुख शब्द का प्रत्यक्ष प्रमाण थे। बाबा बुड्ढा जी नम्रता की मूर्त और सेवा के पुंज थे। उनका संपूर्ण जीवन सादगी भरा और गुरु-घर के लिए सर्मपित था। सिक्खी के प्रचार-प्रसार के लिए उन्होंने तन-मन से सेवा की। नाम-सिमरन और सिक्ख संगत को नाम जपाने के लिए वे सदैव प्रयत्नशील रहे। ❁

गदर लहर में योगदान डालने वाले भाई उत्तम सिंह जी हांस

-स. सिमरजीत सिंह*

ज़िला लुधियाना की तहसील जगरावां का गांव है हांस। इस गांव में स. जीता सिंह के घर महान स्वतंत्रता संग्रामी भाई उत्तम सिंह ने जन्म लिया। माता-पिता ने आप का नाम राघो सिंह रखा। अत: गांव में इसी नाम से प्रसिद्ध थे। जवानी में पांव धरते ही आप खुबसूरत एवं इन्साफ पसंद व्यक्तियों में गिने जाने लगे। उन दिनों में अन्य नौजवानों की तरह आप भी रोज़ी-रोटी की तलाश में तथा उज्ज्वल भविष्य की कामना लेकर कनाडा चले गए। वहां पहुंच कर भारत देश के लोगों के लिए किए जाते भेदभाव तथा हालातों ने आप जी को बहुत प्रभावित किया। कुछ समय के दौरान आप जी का मिलाप देश-प्रेमियों से हो गया तथा आप देश की आज़ादी के कामों में बढ़-चढ़कर हिस्सा लेने लगे। आप १९१४ ई में देश को आज़ाद करवाने हेतु संघर्ष करने के लिए चुनिंदा सज्जनों की हैसियत से तोशा मारू जहाज़ द्वारा भारत आ गए। भारत में आकर आपने पूरी लग्न व मेहनत से देश को आज़ाद करवाने का प्रचार शुरू कर दिया। आप कौमी फकीर बनकर अपने कामों को अंज़ाम देने लगे रहे। आपकी गतिविधियों की सूचना पुलिस को भी लग गई थी। पुलिस आपकी गतिविधियों पर निगाह रखने लग गई थी। लगभग साल भर आप जी ने खूब दिल खोलकर आज़ादी का प्रचार किया। आप देश भक्ति की सेवा में व्यस्त रहते हुए हमेशा श्री गुरु गोबिंद सिंह जी की बाणी का पाठ करते रहते थे :

जो कहूं काल ते भाज के बचीअत तो किह कुंट कहो भजि जईऐ ॥
आगै हूं काल धरे असि गाजत छाजत है जिह ते नसि अईऐ ॥
ऐसो न कै गयो कोई सु दाव रे जाहि उपाव सो घाव बचईऐ ॥
जां ते न छूटीऐ मूड़ कहुं हस तां की किउं न सरणागति जईऐ ॥ *(बचित्र नाटक)*

नवंबर, १९१४ ई में सरदार करतार सिंह सराभा द्वारा लाडोवाल में मीटिंग कर 'डकैती कमिशन' की स्थापना की गई। इस मिशन का मुख्य मंतव्य हथियार खरीदने के लिए पैसों की ज़रूरत को पूरा करने के लिए सिर्फ सरकारी खज़ाना तथा कुछ अमीर आदमियों को लूटना था। डाका डालने की योजना तैयार की गयी। इस योजना अधीन रब्बों, झनेर, राजोआणा तथा दोराहा में डाके डाले गए। जब लुधियाना ज़िले के गांव रब्बों में डाका डाला गया तो घर की मालकिन ने शोर मचा दिया। भाई उत्तम सिंह ने कुछ रुपए दे दिए और कहा, ले माता इससे अपने कपड़े आदि बना लेना। बाद में जब उसके साथियों ने पूछा कि इतने से रुपयों से उस बेचारी का क्या बनेगा तो आपने हंसकर जवाब दिया, "खालसे ने अपने स्वभाव के अनुसार उदारता दिखानी थी, दिखा दी।"

अगस्त, १९१५ ई में एक दिन दूसरे लाहौर साज़िश मिशन में काम करते हुए अपने साथी

**उप सचिव, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर-१४३००६; फोन : ९८१४८-९८२२३*

भाई पूरन सिंघ उर्फ़ ईशर सिंघ ढुडीके के साथ काम करने लगे। गदर लहर फेल हो जाने के कारण आपने काबुल जाने की कोशिश की। होती मरदान पुलिस को आप पर शक हो जाने के कारण आप भाई ईशर सिंघ ढुडीके के साथ फरीदकोट रियासत के महिमा सरजा गांव में साधू के भेस में रहकर प्रचार करने लगे। आप को एक दिन गांव के लोगों ने कहा कि संत जी, आप पाठ करके भोजन ले आया करो। भाई उत्तम सिंघ ने जवाब दिया कि मांग कर खाना खालसे का धर्म नहीं। इस बात पर गांव के कुछ लोगों ने शक किया कि यह साधू नहीं है। कुछ लोगों ने पुलिस के पास जाकर शिकायत कर दी। पुलिस ने आपको पकड़ने के लिए महिमा सरजा गांव पर छापा मारा। आप उस समय भाई ईशर सिंघ के साथ खेतों में सैर करने गए थे। आप जी का स्वचालित पिस्तौल निवास स्थान पर ही पड़ा था। जब पुलिस वालों ने आपको पकड़ा तो आप पुलिस को ही देश-भक्ति की शिक्षा देने लग गए। जब पुलिस अफ़सरों को आपकी असलियत का पता चला तो वो कहने लगे, "सरदार जी हमने आपको डाकू समझकर पकड़ा है। अगर हमें पहले मालूम होता कि आप देश-भक्त हैं, हम आपको हाथ न डालते।" किंतु अब हम मज़बूर हैं, आपकी गिरफ्तारी छिपा नहीं सकते। यह घटना सितंबर, १९१५ ई की है। आपको गिरफ्तार करके लुधियाना की रेलवे हवालात में लाया गया। यहां एक अफ़सर ने आपकी जांच-पड़ताल करते हुए कहा, 'सरदार जी आप कहां-कहां पर रहे, कहां-कहां गए और क्या कुछ किया? अपने स्वभाव के अनुसार ही भाई साहिब ने अफ़सर को कहा कि आप पूछकर क्या करोगे! क्या मुझे फांसी दोगे या छोड़ दोगे? अफ़सर ने कहा, "हम आपको अदालत में ले जाएंगे।" भाई साहिब ने कहा "फिर मेरा आपसे क्या वास्ता है? हमने जो कुछ कहना होगा अदालत में कह लेंगे।" यह सुनकर अफ़सर को कोई जवाब न आया और वह चुप होकर चला गया। इसी तरह एक और अफ़सर से बातचीत करते हुए आपने उसको तू कहकर सम्बोधित किया तो अफसर ने कहा कि मैं एक अफ़सर हूं; इसलिए मेरे साथ ज़रा सोच-समझकर बात करो। आपने उसको उत्तर दिया, "जिसके मुकाबले में मुझे गिरफ्तार किया गया है, तू उसका नौकर है! बता मैं तुझे तू न कहूं तो और क्या कहूं? तेरी मेरे सामने यही हैसियत है।" यह सुनकर अफसर शर्मिंदा हो गया।

आप आज़ादी के इतने प्रवाने थे कि हवालात में भी पुलिस कर्मचारियों को आज़ादी की लड़ाई में हिस्सा लेने की प्रेरणा करते रहते थे। एक दिन जब आप कोतवाली में स्नान कर रहे थे तो एक पुलिस इंस्पेक्टर का पुत्र आप जी के पास आ गया तो आपने उससे पूछा कि पुत्र तू आज़ादी चाहता है या गुलामी? उस लड़के का उत्तर था-- आज़ादी। आपने इंस्पेक्टर साहिब से कहा कि देख मीयां तुम से तो यह बच्चा ही समझदार है जो आज़ादी चाहता है। तुझे अपने पुत्र से शिक्षा लेनी चाहिए। इंस्पेक्टर के पास भाई साहिब की बात का कोई उत्तर नहीं था तथा वह चुप करके चला गया। आप को जेल भेज दिया गया और अदालत में मुकद्दमा चलाया गया। आप जी पर कई तरह जुर्मों में शामिल होने के दोष लगाए गए। इनमें से सबसे बड़ा वल्ला नहर के पुल पर गार्द पर जो हमला हुआ था तथा कुछ सिपाही मारे गए थे, उसमें हिस्सा लेने के बारे में जो मीटिंग कपूरथला में हुई थी, उसमें शमूलियत करने का था। ११ जून को वल्ले पुल पर हमला हुआ था, जिसमें कुछ

सिपाही मारे गए थे।

एक दिन एक गरीब कुम्हार जिसकी हालत बहुत तरसयोग्य थी, आप जी के विरुद्ध गवाही देने आया तो आपने उसकी दशा देखकर कहा, "देखो यह दशा है हमारे भाइयों की। इस बेचारे को क्या मालूम कि हम किस जुर्म में गिरफ्तार हुए हैं। इस पर गुस्सा करना सरासर हमारी बेवकूफी है।" यह कहते हुए आप जी की आंखें आंसूओं से भर गईं।

मुकद्दमे के दौरान आपको दूसरे लाहौर साज़िश मिशन में शामिल होने के कारण फांसी की सज़ा सुनाई गई। सज़ा सुनाने के उपरांत आपने अदालत का धन्यवाद किया और आज़ादी के गीत गाने शुरू कर दिए। यह बहुत नाजुक समय था। जंग के दिन थे, इसलिए अफ़सर मौका देखकर जब ठीक समझते राजसी कैदियों को फांसी लगा देते थे, मृतकों की लाशें भी वारिसों के हवाले नहीं थी की जातीं। इनका अंतिम संस्कार जेल में ही कर दिया जाता था। आप जी को १५ जून, १९१६ ई में लाहौर की केंद्रीय जेल के फांसी घर में रविवार वाले दिन सुबह ४:०० बजे अन्य साथियों सहित फांसी पर लटकाकर शहीद कर दिया गया। आप जी के साथ अन्य देश भक्तों भाई वीर सिंघ सुपुत्र स. बूटा सिंघ बाहोवाल ज़िला होशियारपुर, भाई ईशर सिंघ सुपुत्र स. सज्जण सिंघ गांव ढुडीके कलां, भाई गंगा सिंघ सुपुत्र स. गुरदित्त सिंघ गांव खुदरपुर ज़िला जलंधर, भाई रूड़ सिंघ सुपुत्र स. समुंद सिंघ गांव तलवंडी दुसांझ ज़िला फिरोज़पुर को भी फांसी पर लटकाकर शहीद कर किया गया। 

कविता

धर्म-मर्म जानिए!

*-श्री प्रशांत अग्रवाल**

नफ़रतों की भीड़ में, धर्म कहीं खो गया।
ओढ़ चोला धर्म का, अधर्म हावी हो गया।
धर्म न तूफान में, यह सहज प्रवाह में।
धर्म न आतंक में, यह तो प्रेम-राह में।
धर्म ही वह सूत्र जो, हम सभी को जोड़ता।
है वही अधर्म जो, प्रेम-बंध तोड़ता।
धर्म नहीं थोप सकते, यह बसे स्वभाव में।
धर्म नहीं ओढ़ सकते, यह तो आत्म-भाव में।
धर्म नहीं शोर में, रहता शांत चित्त में।
धर्म नहीं होड़ में, रहता सह-अस्तित्व में।
धर्म ही वह तत्व है, जो सभी को धारता।
खुद को नहीं लादता, बल्कि सबको तारता।
धर्म-मार्ग पर बढ़ें, तो धर्म-मर्म जानिए!
अधर्म के कुमार्ग पर, खुद भटक न जाइए!

**४०, बजरिया मोतीलाल, बरेली-२४३००३ (उ. प्र.), फोन : ९४११६०७६७२*

अकाली मोर्चे : सिद्धांतक व ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

*-सतविंदर सिंघ फूलपुर**

'मोर्चा' फारसी मूल के दो शब्दों मूरचाल तथा मूरचाना का सांझा पंजाबी रूप है। फारसी-पंजाबी कोश के अनुसार मूरचाल के अर्थ हैं : किले के गिर्द खोदी गई खाई तथा मूरचाना के अर्थ हैं : छोटी चींटी, तुच्छ, कमज़ोर।[१] परंतु पंजाबी कोशों में इन दोनों शब्दों के लिए एक ही शब्द **'मोर्चा'** प्रयोग किया गया है, जिसके अर्थ किए हैं : जंगाल (जंग), आड़, झगड़ा, दाग, चींटी, कीट आदि।[२] हिंदी कोशों में जंगाल तथा मैल के संदर्भ में मोर्चा शब्द के अर्थ किए हैं : लोहे पर चढ़ने वाला वह काला अंश जो हवा और नमी के प्रभाव से उत्पन्न होता हो, जंग। शीशे, दर्पण आदि पर जमी हुई मैल।[३]

गुरबाणी में भी मोर्चा शब्द जंगाल, ज़र या मैल के अर्थों में चार बार आया है :

--जनम जनम के लागे बिखु मोरचा लगि संगति साध सवारी ॥ (पन्ना ६६६)

--कहु नानक मोरचा गुरि लाहिओ तह गरभ जोनि कहि आवै ॥ (पन्ना ९७८)

--इहु मनु आरसी कोई गुरमुखि वेखै ॥
मोरचा ना लागै जा हउमै सोखै ॥ (पन्ना ११५)

--भइओ अनुग्रहु मिटिओ मोरचा अमोल पदारथु लाधिओ ॥ (पन्ना ५३०)

आम प्रचलित रूप में इसके अर्थ हैं-- किले की दीवार आदि में बनाया छेद, जिसके द्वारा दुश्मन पर तीर, गोली आदि चलाया जाए, शत्रु के शस्त्रों के बचाव हेतु खोदा गया खड्डा तथा खाई, जिसमें सिपाही छिपकर बैठते तथा दुश्मन पर वार करते हैं।[४]

**संपादक, 'गुरमति ज्ञान' एवं 'गुरमति प्रकाश'।*

पंजाबी-अंग्रेजी कोश के अनुसार मोर्चा शब्द के अंग्रेजी में समानार्थी शब्द हैं : Trench, Fortification, Militory, Position, battle front, Agitation, Political Movement etc[5]

उपरोक्त में शब्द 'Agitation' जो **'मोर्चा'** शब्द से कुछेक समीपता के अर्थ प्रकट करता है परंतु पूर्ण रूप में सिक्ख मोर्चों के लिए उचित नहीं है। कुछ विद्वानों ने इसको **'मोर्चा'** शब्द की जगह बरता है परंतु दोनों शब्दों के अर्थों को गहनता से समझने पर इसके मध्य के सूक्ष्म अंतर स्पष्ट हो जाता है। "Agitation" के अंग्रेजी कोशों में अर्थ मिलते हैं : Public protest in order to achieve political change, worry and anxiety that you show by behaving, in a nervous way. To make other people feel very strongly about something so that they want to help you achieve it.[6] अर्थात् लोगों में चिंता, तौखला, फिक्र, परेशानी व्याकुलता जिसको लोग बेचैन होकर, बुखलाहट तथा उतेजना में आकर प्रकट करें। ऐसी बुखलाहट तथा उतेजना हमेशा अशांति तथा दंगा-फसाद पैदा करने का कारण बनती है। दूसरा ऐजीटेशन में किसी मनोर्थ की पूर्ति हेतु दूसरे लोगों को दृढ़ करवाया जाता है ताकि वह इसकी कामयाबी के लिए आपकी मदद करना चाहें।

किंतु **'मोर्चे'** में सिक्ख स्व-इच्छा से शांत चित होकर गुरुधामों की पावनता की खातिर उत्साहपूर्वक कुर्बानियां देने के लिए जाते हैं। फिर आगे से चाहे लाठियां बरसें या गोलियां

चलें, वो गुरु साहिबान के पावन वचनों *"तनु मनु काटि काटि सभु अरपी विचि अगनी आपु जलाई ॥"* के अनुसार मृत्यु कबूल करते हैं। फिर वो माता जिसका गोदी उठाया हुआ दूध पीता बच्चा दुश्मन की गोली लगने से शहीद हो जाता है, पीछे नहीं हटती, अपने बच्चे को रेत पर रखकर गुरुधामों की पावनता हेतु कुर्बान होने के लिए मोर्चे में शामिल हो जाती है। मोर्चे में सिंघ दुश्मन के ज़ब्र को देखकर घबराते नहीं, उतेजना में आकर अशांति नहीं फैलाते बल्कि ज़ब्र को सब्र से सहन कर शहीदियां पा जाते हैं। प्रसिद्ध लिखारी तथा ईसाई प्रचारक सी-एफ, ऐंड्रीयूज़ जिसने गुरु के बाग के मोर्चे के समय अंग्रेज पुलिस अफ़सर बी. टी. का सिक्खों पर होता अत्याचार अपनी आंखों से देखा था, लिखता है कि सिक्ख बिल्कुल हज़रत ईसा की तरह शांतमयी रहकर ज़ब्र का मुकाबला करते हैं। उनका यह कर्त्तव्य बहुत ही प्रशंसायोग्य है।

इस तरह सिक्ख तवारीख में सिक्ख संघर्ष के समय **'मोर्चा'** शब्द जितना विस्तृत अर्थों में बरता गया है, उसके हूबहू प्रासंगिक अर्थ प्रकट करने वाला शब्द अंग्रेजी भाषा में नहीं मिलता। इसलिए बहुत-सी अंग्रेजी लिखितों में मोर्चा शब्द का लिप्यंतरण करके 'Morcha' ही लिखा मिलता है तथा इसके अर्थ किए मिलते हैं: एक जगह पर बैठे एक ही फैसले को मनाने के लिए अहिल तथा अडोल साधन या अपनी मांगे मनवाने के लिए किसी एक ही उसूल में अड़कर बैठ जाना तथा विरोधी से शांतमयी टक्कर ला देना।[७] इस संदर्भ में मोर्चा शब्द पहली बार सिक्ख इतिहास में आंदोलन या सत्यग्रह के अर्थ में गुरुद्वारा प्रबंध सुधार लहर के मसय प्रचलित हुआ जब गुरुद्वारों की आज़ादी के लिए सिक्ख जत्थे शांतिपूर्वक कार्यवाही करने हेतु जेलों में जाते रहे।[८]

सिक्ख मोर्चों की कामयाबी के कारण राजनीतिक पार्टियों द्वारा यह शब्द शांतमयी आंदोलनों के लिए प्रयोग किया जाने लगा, जैसे किसान मोर्चा, हिंदी मोर्चा, पटवारी मोर्चा आदि। धीरे-धीरे इस शब्द का प्रयोग हिंदी भाषाई क्षेत्रों में आंदलनों या जत्थेबंदियों के लिए होने लग गया। जैसे, जन मोर्चा, लोकहित मोर्चा, झारखंड मुक्ति मोर्चा आदि।[९]

अब मोर्चा शब्द पंजाबी सभ्याचार में इतना ज्यादा प्रसिद्ध हो चुका है कि प्रत्येक कार्य की कामयाबी से सम्बंधित होने के कारण मोर्चा शब्द के अनेकों मुहावरे प्रचलित हो चुके हैं जैसे, मोर्चा लगाना, मोर्चा गाढ़ना, मोर्चा मारना, मोर्चा संभालना, मोर्चा जीतना, मोर्चा फ़तहि करना आदि।

सिक्ख मोर्चों का आरंभ गुरुद्वारों को महंतों के कब्ज़े से आज़ाद करवाने हेतु हुआ। गुरुद्वारों से सिक्खों के अत्यंत सत्कार वाले सम्बंध हैं सिक्खों की चढ़दी कला का प्रकटाव हैं। अंग्रेज सरकार ने पंजाब पर कब्ज़ा करते ही सोच लिया था कि सिक्खी के प्रेरणास्रोत तथा महान केंद्र गुरुद्वारा साहिबान पर कब्ज़ा करना सारे सिक्ख संसार पर काबू पाना है। इसलिए अंग्रेजों ने कूटनीतिक चाल चलते हुए महंतों द्वारा गुरुद्वारों में समूह ब्राह्मणी रीति-रिवाज़ों, वर्ण-विभाजन, जाति-पाति के भेदभाव तथा छूतछात का प्रवेश करवा दिया ताकि सिक्खों का निश्चिय कमज़ोर हो सके और इनकी समर्था में गिरावट आ सके। इन दुराचारी महंतों ने गुरुद्वारों को अंग्रेज राज्य की रक्षा, मज़बूरी के लिए उनकी खुशामद के केंद्र तथा अपने लिए दुराचार के अड्डे बना दिया था। अरदास में राज्य की सलामति तथा खुशहाली की मांग की जाती थी। किंतु सिक्ख अपने गुरुधामों की ऐसी दशा आंखों देखकर किसी भी कीमत पर सहन करने को तैयार नहीं थे। वो किसी भी तरह से गुरुद्वारों

को संगतीय प्रबंध में लाना चाहते थे।

प्रिंसीपल तेजा सिंघ लिखते हैं कि सिक्खों के पास गुरुद्वारों को महंतों के कब्ज़े से आज़ाद करवाने के लिए तीन साधन थे-- न-मिलवर्तन, लोक राय का दबाव तथा मुकद्दमे (There were three ways open to sikhs to carry out reform in their temple; boycott, pressure of public opinion and litigation)[10]

सिक्खों ने सबसे पहले Charitable and Religious Indowment act (act xiv 1920) के तहित अदालत के द्वारा अपने धार्मिक स्थानों का प्रबंध महंतों से वापिस लेने के लिए काफी जद्दो-जहद किया किंतु महंतों की पीठ पर सरकार का थापड़ा होने के कारण अदालतों ने सिक्खों की कोई मदद न की।[११]

क्योंकि गुरुद्वारों के प्रबंध में दख़ल देकर उसको अपने अधीन रखना तथा अपने राज्य की मज़बूती के लिए ही प्रयोग करना ही अंग्रेज सरकार की मुख्य नीति थी। इस बात का पता पंजाब के लैफ. गवर्नर आर. ई. ऐजरटन द्वारा ८ अगस्त, १८८१ को हिंद के वायसराय की तरफ लिखी चिट्ठी से लगता है, जिसमें उसने यह सुझाव दिया था कि गुद्वारों के प्रबंध सम्बंधी अंग्रेज सरकार द्वारा आरंभ की गई पालिसी में कोई तबदीली न की जाए।[१२]

इसलिए जब कानून ने भी कोई मदद न की तो सिक्खों के पास गुरुद्वारों पर ज़ब्री कब्ज़ा करने से इलावा अन्य कोई चारा न रहा। कई स्थानों पर सिक्ख कुछ गुरुद्वारों के प्रबंध पर कब्ज़ा करने में सफल हो गए। किंतु सरकार ने सिविल नोटीफिकेशन जारी कर इसको रद्द कर दिया।[१३]

फिर सिक्खों ने अपने आपको स्थानीय अकाली जत्थों के रूप में संगठित करके शांतमयी आंदोलन को अपना हथियार बना लिया तथा गुरुद्वारों के प्रबंध सुधार के लिए मोर्चे लगाने शुरू कर दिए। ये जत्थे किसी केंद्रीय जत्थेबंदी में न जुड़े होने के कारण अलग-अलग क्षेत्रों में बंटे हुए थे। किसी मज़बूत केंद्र की अनुपस्थिति के कारण ये अपने मुकाम की कामयाबी में पूर्ण रूप पर समर्थ नहीं थे हो सकते। किंतु शिरोमणि गु प्र कमेटी, श्री अमृतसर के अस्तित्व में आने से सिक्खों की बिखरी हुई शक्ति 'हंने हंने मीरी' एकजुट होकर मज़बूत केंद्र का रूप धारण कर गई। इस तरह मोर्चों की गतिविधियां और तेज हो गईं। शिरोमणि गु प्र कमेटी ने मोर्चों में पांचवे व नवम् पातशाह के बताए आदर्श मार्ग पर चलकर अकाल पुरख का हुक्म मानते हुए हाकिम सरकार का बिना विरोध किए हर कष्ट सहन कर, शहादतें प्राप्त करते हुए गुरुद्वारों का प्रबंध पंथक हाथों में लाने का संकल्प लिया तथा दुराचारी महंतों के कुकर्मों की मैल को अपने खून से धोकर मोर्चों का लासानी इतिहास सृजित किया।

एक अंदाज़े के अनुसार इन मोर्चों में दो हज़ार से ज्यादा सिंघ-सिंघणियों ने अपनी जानें कुर्बान कीं तथा इतनी ही गिनती ने बी. टी. की लाठियों की मार झेली। पचास हज़ार से ज्यादा अकालियों ने जेलों की काल कोठड़ियां में तसीहे सहन किए। अपनी जायदादें तबाह करवाईं तथा सोलह लाख से ज्यादा रक्म सिक्ख कौम को जुर्माने के रूप में भरनी पड़ी।[१४]

इन मोर्चों की कामयाबी ने न सिर्फ गुरुद्वारों को ही महंतों के कब्ज़े से आज़ाद करवाया बल्कि देश की आज़ादी के लिए नये पथ बनाकर लोगों में धर्म व देश प्यार के लिए मर मिटने का जज़्बा पैदा किया। इस लिए चाबियों के मोर्चे की मुबारकबाद देते हुए महात्मा गांधी ने कहा था कि यह देश की आज़ादी के लिए पहली फैसलाकुन लड़ाई की जीत है।

यहां हम कुछ ऐतिहासिक मोर्चों के बारे में

संक्षिप्त चर्चा कर रहे हैं।

गुरुद्वारा चुमाला साहिब का मोर्चा : श्री गुरु हरिगोबिंद पातशाह से सम्बंधित ऐतिहासिक गुरुद्वारा चुमाला साहिब, लाहौर में शोभनीक है। गुरुद्वारा चुमाला साहिब (पा: छठी) लाहौर के महंत हरी सिंघ ने गुरुद्वारा साहिब में गुरमति विरोधी माहौल बनाया हुआ था। सराय के सारे कमरे उसने मीट बेचने वाले बुच्चड़ों को दिए हुए थे। खालसा प्रचारक जत्थे ने उनकी कार्यवाहियों के विरुद्ध २१ अगस्त, १९२० को एक मीटिंग बुलाई। महंत ने औरतों से हमला करवाकर मीटिंग में विघ्न डाल दिया। २२ अगस्त को प्रसिद्ध सिक्ख विद्वान तथा लेखक स. सरदूल सिंघ कवीशर तथा उसके साथियों ने गुरुद्वारा साहिब में दीवान सजाकर संगत को गुरुद्वारे के हालातों के बारे में बताया। २७ सितंबर, १९२० ई. को सिंघों ने इकट्ठा होकर गुरुद्वारे के इंतज़ाम के लिए १२ सदस्यीय कमेटी बना दी। पंजाब के खुफिया तंत्र के एक मुखी अफसर वी. डबल्यू. स्मिथ द्वारा फरवरी, १९२२ ई. को बरतानवीय सरकार को भेजी गई एक रिपोर्ट में भी इसका ज़िक्र है कि सिक्खों ने सबसे पहले कब्ज़ा गुरुद्वारा चुमाला साहिब पर ही किया था।[१५]

गुरुद्वारा रकाबगंज साहिब का मोर्चा : अंग्रेज सरकार ने वायसराय की दिल्ली स्थित कोठी का रास्ता सीधा करने के लिए १९१४ ई. को गुरुद्वारा रकाबगंज साहिब की दीवार का कुछ हिस्सा गिरा दिया, जिस पर सिक्खों में सरकार के खिलाफ़ भारी रोष पैदा हुआ। १९१४ ई. में पहली विश्व जंग छिड़ जाने के कारण गुरुद्वारा रकाबगंज साहिब के मोर्चे की जद्दो-जहद धीमी पड़ गई। सितंबर, १९२० में स. सरदूल सिंघ कवीशर द्वारा एक सौ सिंघों का जत्था ले जाकर दीवार को दोबारा निर्मित करने की तज़वीज़ पर अनेकों सिंघों ने अपने नाम पेश किए तथा १ दिसंबर, १९२० ई. को एक सौ सिंघों के जत्थे ने दीवार खड़ी करनी थी किंतु सरकार ने इसके पहले ही दीवार बना दी। इस तरह गुरुद्वारा रकाबगंज साहिब की दीवार का मोर्चा सफल हो गया।[१६]

मोर्चा भाई फेरू जी : भाई फेरू जी का गुरुद्वारा गांव मीएं के मौड़, तहसील चूहणीआं, ज़िला लाहौर में स्थित है। २१ दिसंबर, १९२२ को महंत किशन दास ने चार सौ रुपए महीना लेना मानकर २८ दिसंबर को गुरुद्वारा साहिब का प्रबंध शिरोमणि गु. प्र. कमेटी, श्री अमृतसर को सौंप दिया। कुछ समय बाद वो समझौते से मुक्कर गया तथा गुरुद्वारा साहिब के मैनेजर पर मुकद्दमा कर दिया। ७ दिसंबर, १९२३ को पुलिस ने मैनेजर तथा दस अन्य सिंघों को गिरफ्तार कर लिया। डिप्टी कमिश्नर लाहौर ने गुरुद्वारा साहिब की ज़मीन का इंतकाल शिरोमणि गु. प्र. कमेटी के नाम पर कर दिया। शिरोमणि कमेटी ने ज़मीन का कब्ज़ा लेना चाहा, महंत ने पुलिस की मदद मांगी, पुलिस ने ३४ अकालियों तथा मुजारियों को २ जनवरी, १९२४ को गिरफ्तार कर लिया। ५ जनवरी, १९२४ ई. को भाई फेरू में मोर्चा लग गया। प्रतिदिन २५ सिंघों का जत्था जाकर गिरफ्तारियां देता रहा। छ: हज़ार से ज्यादा गिरफ्तारियां हुईं। २० सितंबर, १९२५ ई. को भाई फेरू में एक खून हो जाने के कारण शिरोमणि गु. प्र. कमेटी ने मोर्चा बंद कर दिया। गुरुद्वारा कानून बन जाने पर जायदाद का झगड़ा खत्म हो गया। गुरुद्वारा साहिब के प्रबंध तथा ज़मीन का कब्ज़ा शिरोमणि गु. प्र. कमेटी, श्री अमृतसर को मिल गया।[१७]

डसके का मोर्चा : सियालकोट के नगर डसका में भाई वरिआम सिंघ का गुरुद्वारा साहिब है। उसके प्रबंध सम्बंधी कुछ देर से हिंदुओं तथा सिक्खों में झगड़ा चला आ रहा था। गुरुद्वारा साहिब का प्रबंध सिक्खों के पास था तथा दुकानें

हिंदुओं के पास थीं। सिक्खों ने हिंदुओं से दुकानें लेने की कोशिश की परंतु वो अदालती ढंग से कामयाब न हो सके। इस पर बाबा खड़ग सिंघ, अध्यक्ष, शिरोमणि गु. प्र. कमेटी, श्री अमृतसर ने मोर्चा लगाने का एलान कर दिया तथा १७ अगस्त, १९३१ ई को २५ सिंघों का जत्था लेकर जेल चले गए। ४ अक्तूबर, १९३१ ई. को मास्टर तारा सिंघ ने शिरोमणि गु. प्र. कमेटी का जरनल इजलास बुलाकर समूह सदस्यों को गुरुद्वारा साहिब के सत्कार के लिए कुर्बानियां देकर पंथ की अगुवाई करने के लिए अपील की। मास्टर तारा सिंघ ने अपने जत्थे समेत गिरफ्तारी दी।[१८] इसके बाद बकायदा जत्थे जाने लग पड़े। गुरुद्वारा साहिब सम्बंधी सालसी फैसला हुआ. . .। इस फैसले को सब ने कबूल कर लिया तथा मोर्चा फ़तहि हो गया।

कृपाण की आज़ादी का मोर्चा : हिंदोस्तान के असला एक्ट (xi 1878) के अनुसार बिना लायसंस या छूट के कोई भी अपने पास हथियार नहीं रख सकता था। इसलिए सिक्खों की कृपाण पर भी पाबंदी लगा दी गयी। सिक्खों ने कृपाण रखने की आज़ादी के लिए मोर्चा शुरू कर दिया। हज़ारों सिक्खों को असला एक्ट की उल्लंघना के कारण जेल भेजा गया। कृपाण बनाने वाली फैकोट्रियों पर छापे डाले गए। इस मोर्चे के हक में प्रचार करने हेतु १९२२ ई. में 'कृपाण बहादुर' नामक साप्ताहिक पत्रिका जारी की गयी, जिसके संपादक स. सेवा सिंघ ने अपने लेखों द्वारा लोक राय कायम करने में उसारू (निर्माणिक) भूमिका निभाई। तीन फूट की कृपाण रखने के कारण पकड़े गए सिक्खों को 'कृपाण बहादुर' का खिताब दिया जाने लगा। १९२२ ई में सरकार तथा शिरोमणि गु. प्र. कमेटी में समझौता हो गया तथा कृपाण रखने पर पाबंदी खत्म कर दी गयी। इससे कृपाण का मोर्चा खत्म हो गया।[१९]

पंजाबी सूबा मोर्चा : देश के विभाजन के बाद भाषा के आधार पर राज्यों के पुनर्गठन की बात चली। पंजाबी भाषा के आधार पर पंजाबी राज्य की मांग के प्रति केंद्र सरकार का रवैया नाकारात्मक देखकर मास्टर तारा सिंघ द्वारा १० मई, १९५४ को जत्थे सहित गिरफ्तारी देकर पंजाबी सूबा मोर्चा आरंभ कर दिया गया। अलग-अलग उतार-चड़ाव में गुज़रता, ऐतिहासिक पथ स्थापित करता हुआ १ नवंबर, १९६६ को पंजाबी सूबा बन जाने से यह मोर्चा फ़तहि हो गया। इस मोर्चे में सतावन हज़ार से ज्यादा सिक्खों ने जेलें काटीं तथा कुछ शहीद भी हुए।

संदर्भ सूची :

१. डॉ राजिंदर सिंघ (संपा.) *फारसी-पंजाबी कोश,* पंजाबी यूनीवर्सिटी, पटियाला, १९९६ पृष्ठ ६६८

२. भाई कान्ह सिंघ नाभा, *महान कोश,* नैशनल बुक्क शॉप, १९९८ पृष्ठ ९९९

३. श्री नवल जी (संपा.) *नालन्दा विशाल शब्द सागर,* न्यू इम्पीरियल बुक डिपो. नई सड़क, देहली, पृष्ठ ११२८

४. *महान कोश,* उपरोक्त

५. एस. एल. (जोशी), (संपा.) पंजाबी अंग्रेजी कोश, पंजाबी यूनीवर्सिटी, पटियाला १९७४, पृष्ठ ७३६

६. *Oxford Dictionary*, (English to English & English to Hindi). P. 30, 26

७. स. बख़शी सिंघ आदिल, *अकाली मोर्चा १९८२,* नवीन प्रकाशन, श्री अमृतसर, १९९०, पृष्ठ १३

८. डॉ. रत्न सिंघ जग्गी, *सिक्ख पंथ विश्व कोश,* भाग दूसरा, गुर रत्न पब्लिशर, पटियाला, २००५, पृष्ठ १४६०

९. Harbans Singh, (Ed.) *The Encyclopedia of Sikhism*, Punjabi, University Patiala, 1997 P. 123

१०. Teja Singh, *The Gurdwara Reform Movement & the Sikh Awakening*, Shiromani Gurdwara Parbhandak Cammittee, Sri Amritsar, 1984, P. 61

११. Mohinder Singh, *The Akali Movement*,

National Institute of Punjab Studies, New Delhi, 1997, P. 17.
१२. डॉ. गंडा सिंघ, *गुरुद्वारा प्रबंध सुधार लहर १९२०-१९२५*, अकादमी ऑफ सिक्ख रिलीज़न एण्ड कल्चर, ढिल्लों मार्ग, पटियाला, १९७८, पृष्ठ ७
१३. Mohinder Singh, Opp. p. 18
१४. दो शबद स. गुरचरन सिंघ टौहड़ा, गिआनी प्रताप सिंघ, *गुरुद्वारा सुधार अकाली लहर*, शिरोमणि गु. प्र. कमेटी, श्री अमृतसर, १९७५, पृष्ठ ८
१५. डॉ कुलवंत सिंघ (बाजवा), (संपा.) *अकाली दल सच्चा सौदा बार*, सिक्ख इतिहास रिसर्च बोर्ड, शिरोमणि गु. प्र. कमेटी, श्री अमृतसर २०००, पृष्ठ १०-११
१६. डॉ. गंडा सिंघ, उपरोक्त, पृष्ठ १०
१७. स. सोहन सिंघ जोश, *अकाली मोरचिआं दा इतिहास*, नवयुग पब्लिशरज़, दिल्ली, १९७२, पृष्ठ ३८८
१८. स. शमशेर सिंघ अशोक, *शिरोमणि गु. प्र. कमेटी का ५० साला इतिहास*, सिक्ख इतिहास, रिसर्च बोर्ड, शिरोमणि गु. प्र. कमेटी श्री अमृतसर, १९९८, पृष्ठ १०४
१९. *सिक्ख पंथ विश्व कोश*, भाग पहला, पृष्ठ ५०५



कविताएं

मेरी दंडवत्

मेरी दंडवत्
अपने अपरंपार को
आधारन आधार को।
मेरी दंडवत्
शबद गुरुदेव को
शाश्वत गुरु-विचार को।
मेरी दंडवत्
युग युगान को
सर्व सचिआर को।
मेरी दंडवत्
सभन के
रोज़ी दिहिंद को
अपने पालनहार को
सबके पालनहार को।
मेरी दंडवत्
ईहां-ऊहां को
सर्व-स्थान को
सर्व साकार को।

नत्मस्तक हूं

नत्मस्तक हूं
अपने परम पितार को
अपने युग युगान को।
नत्मस्तक हूं
संपूर्ण विचार को
ज़िंदगी आधार को
फलसफा निधान को।
नत्मस्तक हूं
मन-ए-अंतर को
अंधों की रोशनी
रोशनार मीनार को।
नत्मस्तक हूं
भटकती मानवता के
मन की सांत्वना
देने योग्य असीम
मने-शांत दातार को।
नत्मस्तक हूं
नत्मस्तक हूं
अपने अपरंपार को।

-डॉ. सुरिंदरपाल सिंघ, पत्तण वाली सड़क, पुराना शाला, गुरदासपुर-१४३५२१, फोन : ९४१७१-७५८४६

साका श्री पंजा साहिब

-स. गुरप्रीत सिंघ 'भोमा'*

गुरुद्वारा श्री पंजा साहिब जगत गुरु श्री गुरु नानक देव जी से सम्बंधित है। जब श्री गुरु नानक देव जी का आगमन हुआ तो चारों ओर अशांति एवं अराजकता का काल था। लोग वहमों, भ्रमों, फोकट कर्मों, आडंबरों आदि में फंसे हुए थे। समाज जातिगत श्रेणियों में विभक्त था और ऊंच-नीच, छूआछूत आदि की जंज़ीरों में जकड़ा पड़ा था। अतः श्री गुरु नानक देव जी ने जनमानस को अंधकारमयी जीवन से बाहर निकालने और उनमें उच्च आदर्श स्थापित करने के लिए प्रचार यात्राएं आरंभ कीं। इन्हीं प्रचार यात्राओं के दौरान श्री गुरु नानक देव जी प्रचार करते हुए हसन अब्दाल (अब पाकिस्तान) पहुंचे। यहां पर वली कंधारी नामक मुस्लिम फकीर हुआ करता था। उसने क्रोध में आकर श्री गुरु नानक देव जी और भाई मरदाना जी पर पहाड़ फेंक दिया था तो गुरु जी ने अपने पंजे (हाथ) से रोककर उसका दर्प चूर किया। गुरु जी का इस स्थान पर आने की स्मृति में गुरुद्वारा श्री पंजा साहिब सुशोभित है। बाद में सिक्ख शूरवीर स. हरी सिंघ नलूआ के द्वारा श्री पंजा साहिब की बहुत सुंदर इमारत तामीर करवाई गई और बहुत सारी जागीर भी इसके नाम लगवाई गई।

जब १८३९ ई महाराजा रणजीत सिंघ परलोक सिधार गए तो पंजाब में चारों ओर गद्दी हथिआने के लिए हाहाकार मच गई; अशांति फैल गई; कत्लेआम शुरू हो गया। उधर गुरुद्वारा साहिबान के प्रबंध को सुयोग्य एवं कुशल ढंग से चलाने के लिए जो महंत स्थापित किए गए थे उन पर भी उल्टा रंग चढ़ने लगा। वो भी आंखें दिखाने लगे। उनके आचरण में गिरावट आने लगी। गुरुद्वारा साहिबान के दर्शनों हेतु आती संगत को भी परेशान करने लगे। महंतों ने गुरुद्वारा साहिबान को ऐशप्रस्ती के अड्डे बना लिया, गुरुद्वारा साहिबान के परिसर में कुकृत्य कार्य करने लगे। पंजाब पर भी अंग्रेजों का राज्य स्थापित हो चुका था। अंग्रेज सरकार किसी भी तरह सिक्खों पर काबू पाना चाहती थी, उनको मालूम था कि सिक्खों के लिए गुरुद्वारा साहिब उनकी शक्ति का केंद्र हैं और उनको गुरुद्वारा साहिबान अपने प्राणों से भी प्रिय हैं इस बात को मद्देनज़र रखते हुए सरकार ने महंतों को अपने पिट्ठू बना लिया और इनके जरिए गुरुद्वारा साहिबान में हस्तक्षेप करना आरंभ कर दिया। महंतों को अंग्रेज सरकार की शह मिल गई तो उन्होंने और ज्यादा अंधेरगर्दी मचा दी। वो लालच एवं भोग विलास में इतने अंधे हो गए कि गुरुद्वारा साहिबान की ज़मीन-जायदाद को अपनी निजी जायदाद समझने लगे। गुरुद्वारा श्री पंजा साहिब का प्रबंध महंत मिट्ठा सिंघ हाथ में था। उसने गुरुद्वारा साहिबान की ज़मीन अपने नाम लगवा ली। लेकिन ये बात सिंघ शूरवीरों को कब मान्य थी? वो कैसे बर्दाश्त कर सकते थे कि उनके पावन गुरुद्वारा साहिबान में कुकृत्थ कार्य हों, जिससे गुरु-घरों की पावनता को आंच आए। उन्होंने गुरुद्वारा साहिबान के प्रबंध को महंतों से छीनकर संगतीय प्रबंध तले लाने की ठान ली। अलग-अलग क्षेत्र में जा-जाकर दीवान सजाए गए, संगत को हालात से अवगत करवाया गया। सिक्खों द्वारा शांतमयी ढंग से गुरुद्वारा सुधार लहर

*गांव भोमा, डाक: वडाला, वीरम, ज़िला : श्री अमृतसर, फोन : ९८७८५५८८५१

के तहत अलग-अलग गुरुद्वारा साहिबान में मोर्चे लगाए गए, जिसमें सिक्खों ने अपनी पावन ज़िंदगियां कुर्बान कर सिक्ख इतिहास को विलक्षण एवं अद्वितीय मोड़ दिया। इन्हीं लगाए गए मोर्चों में श्री पंजा साहिब के साके की घटना घटित होती है जो सिक्खों की दृढ़ता, अडोलता, निर्भयता एवं बहादुरी की गौरवगाथा ब्यान करती है।

हुआ यूं कि जब १९२२ ई में सिक्खों द्वारा लगाए गए प्रसिद्ध एवं ऐतिहासिक 'गुरु का बाग' का मोर्चा के समय सिंघ शूरवीरों को अटक तथा कैमलपुर की जेलों में बंद करने हेतु रेलगाड़ी द्वारा ले जाया जा रहा था। इस बात की ख़बर श्री पंजा साहिब तक भी पहुंच गई और संगत ने कैदी सिंघों की गाड़ी रोककर उनको लंगर आदि छकाने की योजना बनाई। लगभग ३००० की संख्या में संगत शीघ्र लंगर तैयार करके गाड़ी आने से पूर्व स्टेशन पर पहुंच गई। लेकिन स्टेशन मास्टर ने बताया कि 'गुरु का बाग' मोर्चे में गिरफ्तार किए गए सिंघों को अटक और कैमलपुर की ओर लेकर जाने वाली रेलगाड़ी के चालक को गाड़ी न रोकने का सरकारी आदेश प्राप्त है और ये गाड़ी सीधी अटक जाकर ही रुकेगी। यह सुनकर संगत को बहुत दुख एवं निराशा हुई। भाई प्रताप सिंघ एवं भाई करम सिंघ ने संगत को धैर्य बंधाया कि गाड़ी को अवश्य रोका जाएगा और सिंघों को लंगर भी अवश्य छकाया जाएगा। सभी सिंघ-सिंघणियां मन में कैदी सिंघों की सेवा का संकल्प लिए हुए अडोल एवं शांति से रेल की पटड़ी पर बैठ गए। गाड़ी तीव्र गति से आई। चालक ने सीटी बजाकर संगत को पटड़ी से उठने का संकेत दिया किंतु कोई भी सिक्ख टस से मस न हुआ। गाड़ी भाई प्रताप सिंघ व भाई करम सिंघ सहित छः सिंघों पर चढ़ गई। भाई करम सिंघ शहादत को प्रताप हो गए और भाई प्रताप सिंघ गंभीर घायल हो गए। छः सिंघों की टांगें एवं बाजुएं कट गईं। जब भाई साहिब को गाड़ी के पहियों में से निकालने लगे तो भाई साहिब ने कहा कि आप पहले सिंघों को लंगर छकाओ, मेरे बारे में बाद में सोचना। फिर कैदी सिंघों को बड़े प्यार-सत्कार सहित लंगर/प्रसादि छकाया गया। उसके बाद जब भाई प्रताप सिंघ को बाहर निकाला गया वो अभी सिसक रहे थे। उनको गुरुद्वारा श्री पंजा साहिब में लाया गया यहां पर आप भी शहादत को प्राप्त हो गए। इस प्रकार भाई प्रताप सिंघ और भाई करम सिंघ ने पावन शहादत पाकर साका श्री पंजा साहिब को अंज़ाम दिया।

रेल विभाग के भ्रष्ट हाकिमों ने रेलगाड़ी के चालक को नौकरी से मुअत्तल (पदच्युत) कर दिया जबकि उसने अदालत में बयान दर्ज करवाया कि मुझे मौखिक आदेश मिला था कि गाड़ी को किसी भी कीमत पर न रोका जाए। मैं दिए गए आदेश की पालना करता हुआ रेलगाड़ी पूरी रफ्तार से ले जा रहा था किंतु जब गाड़ी भाई प्रताप सिंघ एवं भाई करम सिंघ से टकराई तो मुझे ऐसा लगा कि जैसे गाड़ी किसी पहाड़ से टकराई हो। मेरा हाथ वैक्यूम से छूट गया और गाड़ी रुक गई। इंजन की जांच करने पर भी यही परिणाम सामने आया कि गाड़ी को ब्रेक नहीं लगाई गई। लेकिन फिर भी चालक को नौकरी से हटा दिया गया।

इस प्रकार जांबाज़, बहादुर, शूरवीर सिंघों ने अपने प्राणों की कुबार्नियां देकर रेलगाड़ी को रोका और गाड़ी में सवार सिक्ख कैदियों को लंगर छकाया। आज हमें भी आवश्यकता है कि हम इन शूरवीर बहादुरों के जीवन से उच्च आदर्श प्राप्त कर हक-सच का जीवन यापन, नशे से मुक्त, उच्च आचरण, प्रभु सिमरन करते हुए गुरबाणी आदेशानुसार जीवन व्यतीत करें। अपने गुरुद्वारा साहिबान की पवित्र मर्यादा और मान-सम्मान को बरक़रार रखें और यहीं हमारी सच्ची श्रद्धांजलि होगी। ☸

गुरबाणी चिंतनधारा : १०५

आसा की वार : विचार व्याख्या

*-डॉ. मनजीत कौर**

सलोकु मः १ ॥
पड़ि पड़ि गडी लदीअहि पड़ि पड़ि भरीअहि साथ ॥
पड़ि पड़ि बेड़ी पाईऐ पड़ि पड़ि गडीअहि खात ॥
पड़ीअहि जेते बरस बरस पड़ीअहि जेते मास ॥
पड़ीऐ जेती आरजा पड़ीअहि जेते सास ॥
नानक लेखै इक गल होरु हउमै झखणा झाख ॥
(पन्ना ४६७)

इस सलोक में श्री गुरु नानक पातशाह ने परमेश्वर-प्राप्ति का एक ही उपाय बताया है और वे है परमेश्वर का नाम-सिमरन। साथ ही यह तथ्य भी उजागर किया है दुनियावी ज्ञान जितना मर्ज़ी कोई हासिल कर ले वह केवल अहंकार जैसे भयावह रोग को ही बढ़ाता है। उससे किसी प्रकार का आत्मिक लाभ जीव को प्राप्त होने वाला नहीं है।

गुरु पातशाह पावन फरमान करते हैं कि यदि इतनी धार्मिक पुस्तकों का अध्ययन कर लिया जाये जिनसे अनेक गाड़ियां भरी जा सकें (अर्थात् कोई असंख्य पुस्तकों को पढ़ ले केवल पढ़ ही न ले बल्कि अपने साथ ढेरों पुस्तकें लाद भी ले), यदि इतनी पुस्तकें पढ़ ली जाएं जिनसे नाव भरी जा सके, कई गाड़ियां भरी जा सकें; यदि पढ़ते-पढ़ते कई महीने बीत जाएं, कई साल बीत जाएं अर्थात् आजीवन यह पढ़ाई चलती रहे, यदि पढ़-पढ़कर सारी ज़िंदगी बिता दी जाए, यदि जीवन के अंतिम श्वास तक यह पठन-क्रिया चलती रहे, फिर भी यदि (मन में विवेक पैदा नहीं हुआ, मन जागा नहीं, प्रभु-भक्ति का असल भाव नहीं समझा तो) प्रभु-नाम सिमरन की वास्तविक कमाई के बिना सब व्यर्थ है। कहने से तात्पर्य कि बात तो नाम-सिमरन की युक्ति समझने की है, ज़रूरी नहीं कि जो ज्यादा (धार्मिक) पुस्तकों, ग्रंथों का पठन करते हों उन्हें ही यह बात समझ में आती है।

वस्तुत: श्री गुरु नानक पातशाह ने उपरोक्त सलोक में समकालीन पंडितों, विद्वानों की ओर संकेत किया है, जो पुस्तकीय ज्ञान की बदौलत अहंकारी होकर दूसरों से शास्त्रार्थ करते तर्क-वितर्क करते थे और दूसरों को अपने ज्ञान के बल पर पराजित कर विजय के अभिमान में चूर हो जाते थे।

गुरबाणी आश्यानुसार ऐसा पुस्तकीय ज्ञान व्यर्थ है। इसका ईश्वर की दरगाह में फूटी कौड़ी भी मोल नहीं; इसके विपरीत प्रभु-सिमरन में ही सारी रहमतें और बरकतें समाई हैं। 'सुखमनी साहिब' बाणी में पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी पावन फरमान करते हैं कि प्रभु के सिमरन में ही समस्त रिद्धियां-सिद्धियां तथा नौ खज़ाने हैं। प्रभु-सिमरन में ही ज्ञान-सुरति ठहराव तथा जगत के मूल प्रभु की समझ की विवेक बुद्धि है :

प्रभ कै सिमरनि रिधि सिधि नउ निधि ॥
प्रभ कै सिमरनि गिआनु धिआनु ततु बुधि ॥
(पन्ना २६२)

वास्तव में ज्ञान का मूल उद्देश्य तो स्वयं की पहचान करनी है :

मन तूं जोति सरूपु है आपणा मूलु पछाणु ॥
(पन्ना ४४१)

२/१०४, जवाहर नगर, जयपुर-३०२००४, फोन : ९९२९७-६२५२३

केवल दूसरों को बहस अथवा कुतर्क से नीचा दिखाने की भावना हेतु अर्जित किया गया पुस्तकीय ज्ञान वास्तविक ज्ञान नहीं है, बल्कि अहंकार के विष को बढ़ाने वाला रासायन है जो स्वयं एवं दूसरों के लिए घातक ही सिद्ध होता है। वास्तव में ज्ञान को प्राप्त करके किसी पर कटाक्ष नहीं करना चाहिए अथवा व्यंग्य-बाण नहीं चलाने चाहिए बल्कि विवेकशील एवं विनम्र बनना है :

मंदा किसै न आखीऐ पड़ि अखरु एहो बुझीऐ ॥
(पन्ना ४७३)

बाहरी ज्ञान तो अनेकों ने प्राप्त कर लिया और अनेकों प्राप्त कर रहे हैं, मगर जब तक अंदर का ज्ञान नहीं जागा तब तक कोई लाभ होने वाला नहीं हैं।

मः १ ॥
लिखि लिखि पड़िआ ॥ तेता कड़िआ ॥
बहु तीरथ भविआ ॥ तेतो लविआ ॥
बहु भेख कीआ देही दुखु दीआ ॥
सहु वे जीआ अपणा कीआ ॥
अंनु न खाइआ सादु गवाइआ ॥
बहु दुखु पाइआ दूजा भाइआ ॥
बसत्र न पहिरै ॥ अहिनिसि कहरै ॥
मोनि विगूता ॥ किउ जागै गुर बिनु सूता ॥
पग उपेताणा ॥ अपणा कीआ कमाणा ॥
अलु मलु खाई सिरि छाई पाई ॥
मूरखि अंधै पति गवाई ॥
विणु नावै किछु थाइ न पाई ॥
रहै बेबाणी मड़ी मसाणी ॥
अंधु न जाणै फिरि पछुताणी ॥
सतिगुरु भेटे सो सुखु पाए ॥
हरि का नामु मंनि वसाए ॥
नानक नदरि करे सो पाए ॥
आस अंदेसे ते निहकेवलु हउमै सबदि जलाए ॥२॥

उपरोक्त सलोक में श्री गुरु नानक पातशाह ने सतिगुरु की महिमा प्रतिपादित की है और समझाया है कि गुरु-ज्ञान से वंचित व्यक्ति केवल बाहरी प्रपंचों में पड़कर निरर्थक साधनों में गलतान होकर अपना बेशकीमती जीवन बर्बाद कर लेता है। फिर उसके पास पश्चाताप ही शेष रह जाता है।

गुरु पातशाह पावन फरमान करते हैं कि कोई व्यक्ति (दुनियावी) जितनी पढ़ाई-लिखाई करता है उतना ही वो अहंकारी हो जाता है। जितना कोई अधिक तीर्थों की यात्रा करता है उतना ही वह इसका हर जगह बखान करता फिरता है। किसी ने (प्रभु-प्राप्ति) हेतु कई वेश धारण किए हुए हैं और कई अपने शरीर को नाना प्रकार के कष्ट दे रहे हैं। कहने से अभिप्राय कुछ लोग बाहरी वेश द्वारा तो कुछ अपने शरीर को कष्ट देने से प्रभु-मिलाप के मार्ग खोजते फिरते हैं, लेकिन गुरबाणी आशयानुसार ऐसा मुमकिन नहीं है। ये समस्त क्रियाएं प्रभु के दर पर कबूल नहीं होतीं।

कुछ लोग अन्न छोड़कर व्रत आदि रखते हैं और अपने जीवन का स्वाद ही गंवा लेते हैं अर्थात् ईश्वर का नाम-सिमरन छोड़कर ज़िंदगी को नीरस बनाने वाले लोग अंततः दुख ही पाते हैं। जो व्यक्ति वस्त्र आदि का त्यागकर देते हैं वे भी दिन-रात दुख ही पा रहे हैं अर्थात् वस्त्र आदि के त्याग से शरीर को ही कष्ट देने वाली बात है। इस तरह कष्ट सहने से परमात्मा प्रसन्न नहीं होता। मौन धारण कर कोई व्यक्ति अगर अज्ञानता की नींद में सोया हुआ है तो वह गुरु के ज्ञान के बिना कैसे जागेगा? अर्थात् अज्ञानता की नींद गुरु के ज्ञान के बिना कैसे खुल सकती है? मौन धारण करके भी व्यक्ति अंततः दुखी ही रहता है। जो पावों में जूती नहीं

पहनता अर्थात् नंगे पांव चलता है वह भी अपनी मूर्खता पर पछताता है। नंगे पांव रहने से भी कुछ संवरने वाला नहीं। यह भी एक प्रकार से शरीर को दुख देने मात्र ही है। (इसके अतिरिक्त) अखाद्य (न खाने योग्य पदार्थों) को खाता हुआ मनुष्य अपने सिर में राख डालता है अर्थात् ऐसे मूर्ख व्यक्ति ने लोगों में अपनी इज्जत गंवा ली समझो। परमेश्वर ने नाम के बिना किसी तरह का कोई भी साधन (उपक्रम) प्रभु की दरगाह में प्रवान नहीं। जो व्यक्ति जंगल (उजाड़), कब्रों तथा शमशानों में रहता है ऐसा मूर्ख अंधा व्यक्ति कुछ भी नहीं जानता। इसका फल खोटा ही होता है। फिर पछताना है। (असल में) सुख तो वह पाता है जिसे पूर्ण गुरु मिल जाता है। वही भाग्यशाली जानो जो सतिगुरु से मिलकर प्रभु-नाम को हृदय में बसाता है। गुरु पातशाह पावन फरमान करते हैं कि गुरु उन्हें ही प्राप्त होता है जिन पर ईश्वर की रहमत होती है और वही गुरु के शबद के द्वारा दुनियावी आशाओं एवं चिंताओं से मुक्त रहते हैं और अपने अहंकार को समूल नष्ट कर लेता है।

वस्तुत: उपरोक्त सलोक में श्री गुरु नानक देव जी ने कलयुगी जीवों का मार्गदर्शन करते हुए यह स्पष्ट कर दिया है कि कोई इस भ्रांति में न रहे कि बाहरी किसी उपक्रम, क्रिया-कलाप या दिखावे से प्रभु को प्रसन्न करने अथवा उसकी रहमत का पात्र बनने का अधिकारी हो सकता है। इसके लिए लाज़मी है (नितांत आवश्यक है) सच्चे गुरु की प्राप्ति। यह भी अटल सच्चाई है कि परमेश्वर की कृपा से ही सतिगुरु मिलते हैं और सतिगुरु की रहमत से प्रभु की प्राप्ति होती है अर्थात् उसकी सर्वव्यापकता का बोध हो जाता है। गुरबाणी में बार-बार जीव को सुचेत किया है कि प्रभु की प्राप्ति बाहरी प्रपंचों से संभव नहीं है। इस (आसा की वार) बाणी के प्रारंभ में ही गुरु की महिमा का बखान किया गया है :

बलिहारी गुर आपणे दिउहाड़ी सद वार ॥
जिनि माणस ते देवते कीए करत न लागी वार ॥ (पन्ना ४६२)

गुरु में ही सामर्था है जो साधारण मनुष्य को देवता बना देते हैं, जीवन की युक्ति समझा कर। गुरु ही व्यर्थ के आडंबरों से मुक्त करता है। गुरु की मध्यस्थता इसलिए भी अनिवार्य है कि इंसान अपनी किसी प्राप्ति का गुमान करके अपनी कमाई व्यर्थ न गंवा दे। हर समय उसके हृदय में यह भाव दृढ़ रहे कि यह सब गुरु की रहमत से ही मुमकिन हुआ है, अन्यथा मेरी क्या सामर्था। पंचम पातशाह की पावन बाणी में इसी भाव के दर्शन होते हैं। कहते हैं कि जब श्री गुरु अरजन देव जी ने श्री गुरु ग्रंथ साहिब की संपादना का महान कार्य संपूर्ण किया तो इस विलक्षण कामयाबी को प्रभु-चरणों में समर्पित करते हुए विनम्रता से विनती की जो आज भी समूची मानवता का मार्गदर्शन करने में कारगर सिद्ध होती है।

तेरा कीता जातो नाही मैनो जोगु कीतोई ॥
मै निरगुणिआरे को गुणु नाही आपे तरसु पइओई ॥
तरसु पइआ मिहरामति होई सतिगुरु सजणु मिलिआ ॥
नानक नामु मिलै तां जीवां तनु मनु थीवै हरिआ ॥ (पन्ना १४२९)

गुरु-कृपा से ही नाम-सिमरन की दात प्राप्त होती है। अरदास में भी प्रभु से मांगे जाने वाले सभी दानों से इसे ही सर्वोत्म दान कहा गया है।

पउड़ी ॥
भगत तेरै मनि भावदे दरि सोहनि कीरति गावदे ॥
नानक करमा बाहरे दरि ढोअ न लहन्ही

धावदे ॥
इकि मूलु न बुझन्हि आपणा अणहोदा आपु गणाइदे ॥
हउ ढाढी का नीच जाति होरि उतम जाति सदाइदे ॥
तिन्ह मंगा जि तुझै धिआइदे ॥९॥

पउड़ी में गुरु पातशाह जी ने प्रभु-भक्तों की महिमा का गान किया है जो परमेश्वर की भक्ति में लीन रहते हैं। इसके विपरीत ऐसे जीव जो परमेश्वर की बंदगी नहीं करते, उन्हें भाग्यहीन माना है क्योंकि वे जीवन का मकसद नहीं समझते तथा गुणहीन होते हुए भी स्वयं को गुणवान मानने की गुस्ताखी करते हैं।

गुरु पातशाह पावन फरमान करते हैं कि हे वाहिगुरु! आपको आप के भक्त प्यारे लगते हैं जो आपकी उपमा कर रहे हैं तथा आपके दर पर शोभायमान हैं अर्थात् आपकी स्तुति करते हुए आपके दर पर हे मालिक! वे शोभा पा रहे हैं। श्री गुरु नानक देव जी के चिंतनानुसार अच्छे कर्मों से वंचित मनुष्य (जीवन-मार्ग में) भटकते रहते हैं। उन्हें परमेश्वर के दर पर ठिकाना नहीं मिलता, क्योंकि वे अपने मूल को नहीं पहचानते तथा बिना ईश्वरीय गुणों के स्वयं को श्रेष्ठ मानते हैं।

हे वाहिगुरु। मैं तो निम्न (नीच) जाति का ढाडी (महिमा गायन करने वाला) हूं तथा अन्य लोग स्वयं को उच्च जाति का (कुलीन) मानते हैं। मैं तो (केवल) आपके भक्तों की संगत मांगता हूं।

उपरोक्त पउड़ी में गुरु पातशाह ने जहां भक्तों की उपमा की है वहीं यह भी स्पष्ट किया है कि भक्ति के साथ विनम्रता भी ज़रूरी है। कहीं भक्त किसी अपने विशेष गुण एवं प्राप्ति का गुमान न कर बैठे। गुरबाणी में यही तो सीख दी गई है कि बेशक भगवान भक्तों के करीब है लेकिन भक्तों का मान-तान (बल) सब कुछ वाहिगुरु ही है :

सभु को तेरै वसि अगम अगोचरा ॥
तू भगता कै वसि भगता ताणु तेरा ॥
(पन्ना ९६२)

भक्ति ईश्वर द्वारा बख़्शी हुई सर्वोत्म दात है जो किसी भाग्यशाली को ही नसीब होती है। कर्महीन व्यक्ति भक्ति नहीं कर सकता। गुरबाणी में अन्यत्र भी प्रभु का गुणगान करने वालों को भाग्यशाली माना गया है। प्रभु-नाम ही जन्म जन्मांतरों का पाप नष्ट करने वाला है :

बडभागी तिह जन कउ जानहु जो हरि के गुन गावै ॥
जनम जनम के पाप खोइ कै फुनि बैकुंठि सिधावै ॥ *(पन्ना ९०१)*

यह सारी रचना उस मालिक की है। वह जीवों को जिस तरह के कर्म में प्रवृत्त करता है जीव उसी में लग जाते हैं। हम सब तो मानो वाद्य-यंत्र हैं। प्रभु हमें जैसे बजाता है हम वैसे ही बजते हैं :

इहु जगु वरनु रूपु सभु तेरा जितु लावहि से करम कमईआ ॥
नानक जंत वजाए वाजहि जितु भावै तितु राहि चलईआ ॥ *(पन्ना ८३४)*

गुरु पातशााह ने स्वयं को परमेश्वर का ढाडी मानते हुए विनम्रता के गुण को धारण किए रखने का पावन संदेश दिया है। साथ ही प्रभु की स्तुति करने वालों की संगत मांगी है, उनकी निकटता चाही है। गुरबाणी में अन्यत्र भी इसी भाव के दर्शन होते हैं :

दासनि दास दास होइ रहीऐ जो जन राम भगत निज भईआ ॥ *(पन्ना ८३४)*

ख़बरनामा

जत्थेदार अवतार सिंघ ने अमेरिकी सफ़ारतखाने द्वारा सिक्ख को दसतार उतारने के लिए मज़बूर करने पर कड़ी निंदा की

श्री अमृतसर : २७ अगस्त : जत्थेदार अवतार सिंघ, अध्यक्ष, शिरोमणि गु. प्र. कमेटी ने अमेरिकी सफ़ारतखाने द्वारा भाजपा सांसद सदस्य स. वरिंदर सिंघ को दसतार उतारने के लिए मज़बूर करने पर कड़े शब्दों में निंदा की है।

उन्होंने कहा कि दसतार सिक्ख की रिवायती शान की प्रतीक होने के साथ-साथ उनकी पहचान भी है जो कदापि उतारी नहीं जा सकती। उन्होंने कहा कि सिक्ख कौम सरबत्त का भला चाहने वाली कौम है और इसने अमेरिका की आर्थिक तरक्की में महत्त्वपूर्ण योगदान डाला है। इसके अतिरिक्त सिक्ख अमेरिका में सम्मानयोग ओहदों पर तैनात भी हैं। उन्होंने कहा कि बार-बार अमेरिकी सफ़ारतखाने द्वारा सिक्खों के साथ इस तरह का बरताव करना उचित नहीं है।

उन्होंने भारत की विदेश मंत्री श्रीमती सुषमा स्वराज को कहा कि वो अमेरिका के सफ़ारतखाने के साथ बातचीत करके सिक्खों की शख़्सियत, आचरण तथा पहरावे के बारे में जानकारी मुहैया करवाएं ताकि अमेरिकी सफ़ारतखाने द्वारा बार-बार सिक्खों को दसतार उतारने के लिए मज़बूर न किया जाए।

श्री गुरु नानक देव जी तसवीर से छेड़छाड़ करने वाले दोषी के विरुद्ध सख़्त कार्यवाही हो : जत्थेदार अवतार सिंघ

श्री अमृतसर : २७ अगस्त : शिव सेना के वर्कर रमीश कुमार के विरुद्ध सोशल मीडिया पर सिक्ख धर्म के प्रवर्त्तक श्री गुरु नानक देव जी की तसवीरों से छेड़छाड़ करते हुए अभद्र शब्दावली प्रयोग करने पर सख़्त कानूनी कार्यवाही होनी चाहिए। इन विचारों का प्रक्टावा जत्थेदार अवतार सिंघ, अध्यक्ष, शिरोमणि गु. प्र. कमेटी ने यहां से प्रेस विज्ञप्त में किया।

उन्होंने कहा कि श्री गुरु नानक देव जी ने आर्थिक असमानता, लूट-खसूट, छीना-झपटी को देखते हुए, "नाम जपो, किरत करो, वंड छको" के बुनियादी सिद्धांतों का प्रचार किया। उन्होंने कहा कि शिव सेना के वर्कर द्वारा सिक्खों की धार्मिक भावनाओं को भड़काने की कोई कोर-कसर नहीं छोड़ी गई। उन्होंने कहा कि शिव सेना के वर्कर ने श्री गुरु नानक देव जी के बारे में जानकारी न होने के कारण इस घटना को अंज़ाम दिया है, जिसको किसी भी कीमत पर बर्दाश्त नहीं किया जा सकता। उन्होंने कहा कि शिरोमणि गु. प्र. कमेटी सिक्खों की सिरमौर धार्मिक जत्थेबंदी है तथा सिक्ख गुरु साहिबान के बारे में अभद्र शब्दावली अथवा गुरु साहिबान की तसवीरों से छेड़छाड़ करने की किसी को भी अनुमति नहीं देती। उन्होंने कहा कि सिक्ख प्रत्येक धर्म का आदर-सम्मान करते हैं किंतु यदि कोई गलत

हरकत करता है तो उनके विरुद्ध कानूनी कार्यवाही भी अवश्य होनी चाहिए।

उन्होंने कहा कि इससे पहले भी सोशल साईट (फेसबुक) पर हिंदू समाज पंजाब नामक पेज में शरारती अनसरों द्वारा दशम पातशाह श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की तसवीर से छेड़छाड़ की गई थी। इसके साथ ही पंथ माता साहिब कौर जी, बेबे नानकी जी तथा माता गुजरी जी तथा अन्य कौमी शहीदों के प्रति अपमानजनक शब्दावली बरती गई थी, जिसका शिरोमणि गु. प्र. कमेटी द्वारा सख़्त नोटिस लिया गया था। उन्होंने मौजूदा घटना के दोषी रमीश कुमार के विरुद्ध सिक्खों की भावनाओं को गहरी ठेस पहुंचाने हेतु साईबर क्राईम सैल को पूरी जांच-पड़ताल करते हुए सख़्त से सख़्त कार्यवाही करने की अपील की है ताकि सोशल मीडिया का नाजायज़ प्रयोग करने वालों को अंकुश लगाया जाए।

जत्थेदार अवतार सिंघ ने जम्मू-कश्मीर में ४ सदस्यीय प्रतिनिधि मंडल भेजा

श्री अमृतसर : ३१ अगस्त : जम्मू-कश्मीर में दिन-प्रतिदिन बिगड़ रहे हालातों तथा सिक्खों को दरपेक्ष आती मुश्किलों सम्बंधी बातचीत करने के लिए जत्थेदार अवतार सिंघ, अध्यक्ष, शिरोमणि गु. प्र. कमेटी द्वारा चार सदस्यीय प्रतिनिधि मंडल कश्मीर भेजा गया।

कार्यालय से प्रेस विज्ञप्त में बात करते हुए शिरोमणि गु. प्र. कमेटी के अपर सचिव तथा वक्ता स. दिलजीत सिंघ ने बताया कि इस प्रतिनिधि मंडल में स. राजिंदर सिंघ महिता तथा स. मोहन सिंघ बंगी कार्यकारिणी सदस्य, स. हरचरन सिंघ मुख्य सचिव तथा स. बलविंदर सिंघ जौड़ासिंघा अपर सचिव शामिल हैं। उन्होंने कहा कि यह प्रतिनिधि मंडल जम्मू-कश्मीर में मुख्यमंत्री श्रीमती महिबूबा मुफ्ती सय्यद तथा गवर्नर श्री एन. एन. वोहरा को मिलकर सिक्खों को दरपेक्ष आती मुश्किलों तथा उनकी जान-माल की रक्षा हेतु विशेष व्यवस्था करने पर बात करेगा। स. दिलजीत सिंघ ने जत्थेदार अवतार सिंघ द्वारा हवाला देते हुए कहा कि १९४७ ई से लेकर अब तक जम्मू-कश्मीर की धरती पर रह रहे सिक्खों के हालात हमेशा बदत्तर ही रहे हैं। उन्होंने कहा कि कश्मीरी सिक्खों के बच्चे पढ़-लिखकर भी बेकार हैं तथा सरकारों ने अल्प संख्या कमिशन की सिफारशों को लागू नहीं किया। उन्होंने कहा १९४७ ई में शहीद हुए पचास हज़ार सिक्खों का रक्त कश्मीर की धरती तिब्बत, गिलगत, आसकरदूम कार्गिल चकार, मुजफ्फराबाद चकोटी, बारामूला, बड़गाम के गावों में बहाया है किंतु इतनी कुबार्नियां देने के बावजूद भी कश्मीरी सिक्खों को उनके हक नहीं मिल सके। उन्होंने कहा कि कश्मीरी सिक्खों ने अहम भूमिका निभाई है उनकी जान-माल की रक्षा करना तथा उनकी बहु-बेटियों की हिफ़ाजत करना कश्मीर तथा भारत सरकार का प्रथम फ़र्ज है।

स. दिलजीत सिंघ ने कहा कि कश्मीर एक सैक्यूलर स्टेट (धर्म निरपेक्ष राज्य) है और वहां की सरकार को प्रत्येक धर्म के व्यक्तियों खासकर सिक्ख समुदाए का विशेष ध्यान रखना चाहिए। उन्होंने कहा कि जत्थेदार अवतार सिंघ द्वारा भेजा गया प्रतिनिधि मंडल वहां के सिक्खों को आ रहीं मुश्किलों के बारे में अलग-अलग सिक्खों से बातचीत करेगा। 